चन्दामामा
अप्रैल १९८७
2.50
Rs.

"बनता है ये खेल खेल में हँसी खुशी में, रेल पेल में सोच समझ कर झट चिपकाओ मौज-मौज में इसे बनाओ"

फ़ेवी फ़ेयरी

"जादू का करिश्मा नहीं
हाथ का कमाल है
पैसे का सवाल नहीं
काम बेमिसाल है।"
"जल्दी आकर हमें बताओ
करना क्या है—यह समझाओ।"
"जल्दी आओ
सब कुछ सुन लो....
सोचो समझो झट चिपकाओ
फ़ेविकोल एम आर को लाओ
मोर बनाओ,
गुड़िया, टोकरी, पर्स बनाओ
न चिप-चिप है, न है गंदगी
मज़े-मज़े में करते जाओ
करते जाओ॥"

इस ऐस्टर्स फूल को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए यह कूपन भेजिए, इस पते पर लिखिए: 'फ़ेवी फ़ेयरी' पोस्ट बॉक्स ११०८४, बम्बई ४०० ०२०

इस ऐस्टर्स फूल को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन 'फ़ेवी फ़ेयरी' पोस्ट बॉक्स ११०८४ बम्बई ४०० ०२० के पते पर पोस्ट कर दो

नाम ______
उम्र ______
पता ______
______
नगर ______
राज्य ______ पिन ______
क्या आपको हमारा जर्नल फ़ेविक्राफ्ट मिल गया हाँ/नहीं

उत्तम काम, उत्तम नाम फ़ेविकोल का यह परिणाम

® ये और फ़ेविकोल शब्द दोनों पिडिलाइट इण्डस्ट्रीज़ प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई ४०० ०२१ के रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क हैं.

OBM 9403 HN

डायमंड कामिक्स में
कार्टूनिस्ट प्राण का
चन्नी चाची का फोटो 4/-
अन्य नये डायमंड कॉमिक्स
पलटू और चमचे का कमाल
पिंकी और जंगल के दुश्मन
महाबली शाका और स्पाईडर किंग
अंकुर और हवालात की सैर
ताऊ जी और चाण्डाल मणि
प्रत्येक 4/-
प्राण
चन्नी चाची का फोटो
अंकुर बाल बुक क्लब
डायमंड कॉमिक्स की बच्चों के लिये नई निराली अनुपम योजना अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनिये और हर माह घर बैठे डायमंड कॉमिक्स डाकव्यय की फ्री सुविधा के साथ प्राप्त करें।
सदस्य बनने के लिए आपको क्या करना होगा :–
1. संलग्न कूपन पर अपना नाम व पता भर कर भेज दें। नाम व पता साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में आसानी हो।
2. सदस्यता शुल्क पांच रुपये मनी आर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें। सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
3. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 2/- की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी।
4. आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जायेगा यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें।
5. इसी योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।
सदस्यता कूपन
मुझे अंकुर बाल क्लब का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनी आर्डर/डाक टिकट के साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं दी जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूँ।
नाम ....
पिता का नाम ....
पता ....
डाकखाना ....
जिला ....
जूडो कराटे और बाक्सिंग सीखाने वाली पुस्तक
जूडो कराटे और बाक्सिंग कैसे सीखें 6/-
सचित्र जीवनी सहित
सुनील गावस्कर
10/-
स्वास्थ्य रक्षा के लिए उपयोगी पुस्तक
शारीरिक प्रशिक्षण पी० टी० व ड्रिल 6/-
हंसने और हंसाने के लिए पढ़िए
चुटकले ही चुटकले
10/-
JOKES JOKES
कम्प्यूटर जानकारी के लिए
कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग कोर्स 12/-
फोटोग्राफी की सम्पूर्ण जानकारी के लिए पढ़िए
कम्पलीट फोटोग्राफी
6/-
डायमंड कॉमिक्स डाइजेस्ट
12/- प्रत्येक
लम्बू मोटू
रामायण
प्राण
चाचा चौधरी
ताऊ जी
डायमंड कामिक्स प्रा.लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

लिओ के लाड़ले हीरो
मौज मनाएं सबसे बढ़कर...
देख लो लिओ लेकर!
LEO
ऑटो रायफ़ल
५ से १२ वर्ष तक
बड़ी बंदूक, बड़ा निशाना...
बहादुरी से लड़ते जाना!
कैरी-ऑन शेफ़
५ वर्ष से अधिक
शेफ़ को सही राह दिखाओ
केक के ऊपर केक जमा करो, और विजयी बनो!
ले-एन-एग
७ वर्ष से अधिक
बैटरी से चले. बटन दबाओ, जल्दी-जल्दी
ज़्यादा अंडे पकड़ो!
बीच क्राफ़्ट
२ से ५ वर्ष तक
ज़मीन पर रगड़ो, छोड़ो.
ये चले तो इंजन भी हिले-डुले!
पायलट आप बनें!
डेयर डेविल
२ से ५ वर्ष तक
ज़मीन पर रगड़ो, छोड़ो
और फ़ायर इंजन दौड़ाओ. बहादुरी से
आग बुझाओ!
DAREDEVIL
रेसिंग रोवर
३ वर्ष से अधिक
दो हिस्सों को अलग-अलग खींचो,
जीप में शक्ति भरो, और छोड़ो.
चलो अब दूर-दूर की सैर करो!
फ़ॉल्कन
३ वर्ष से अधिक
पीछे खींचकर छोड़ो, तेज़ी से आगे बढ़े,
नयी-नयी दुनिया में आप उड़ें!
लैण्ड क्रूज़र
३ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाली जीप
टकराए, मुड़े, आप मज़े से चले...
मोबाइल कार
३ वर्ष से अधिक
जानी-मानी स्पोर्ट्स कारों के नन्हे मॉडल.

आओ
अंकल लिओ क्लब के सदस्य बनो!
UNCLE LEO CLUB
Come join the fun!
कोई भी लिओ खिलौना खरीदकर, आप भी अंकल लिओ क्लब के सदस्य बन सकते हैं. जल्दी कीजिए, क्योंकि पहले २५,००० बच्चों के लिए एक साल की सदस्यता बिल्कुल मुफ़्त है!
शूट-आउट-गन
५ वर्ष से अधिक
निशाना लगते ही मज़बूती से चिपके. आपको साफ़-साफ़ दिखे!
फ़्लाइंग डिस्क
६ वर्ष से अधिक
फ़्लाइंग डिस्क उड़ाओ, चांद सितारों से आगे बढ़ाओ!
माॅज़र पिस्टल
८ वर्ष से अधिक
मशहूर माॅज़र पिस्टल का हूबहू नन्हा रूप!
मेल वैन
३ से ९ वर्ष तक
दोस्तों को लिखो चिट्ठी-खत. मेल वैन में पहुंचाओ फटाफट!
ऑटो पिस्टल
४ से १० वर्ष तक
गोली चलने की दनादन आवाज़,ऊपर उठाओ, निशाना लगाओ... दुश्मन को मार गिराओ!
बुल्स आय
७ वर्ष से अधिक
निशाना लगाओ, गोली चलाओ. निशानेबाज़ी के कमाल दिखाओ!
फ़ाइटर जैट
३ वर्ष से अधिक
पीछे खींचकर छोड़ो. तेज़ी से बढ़े, हर लड़ाई शान से लड़े!
मार्टिनी पोर्श
३ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाली स्पोर्ट्स कार. छूते ही ये घूमे-मुड़े, देखो कैसी सरपट दौड़े!
फ़्लाइंग सॉसर गन
५ वर्ष से अधिक
नन्ही उड़न तश्तरियां उड़ाए, अंतरिक्ष में ले जाए,तुम्हें स्टार वॉर्स हीरो बनाए!
स्लाइड राइड
४ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाला रोलर कोस्टर. तेज़ रफ़्तार... गोल-गोल, ऊपर-नीचे भागती कार!
छुक-छुक ट्रेन
३ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाला ट्रेन सेट. छुक-छुक, भक-भक, यह आई सुपरफ़ास्ट एक्सप्रेस!
LEO TOYS
बच्चों के सच्चे साथी
LINTAS LEO P1 2032 HI

चन्दामामा

मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक उत्कृष्ट मासिक पत्र

* चन्दामामा हमारे पुराण व साहित्य के श्रेष्ठ रत्नों को क्रमबद्ध रूप में प्रदान करता है ।
* व्यापक दृष्टिकोण को लेकर विश्व साहित्य की अद्भुत काव्य कथाओं को सरल भाषा में प्रस्तुत करता है ।
* मृदुहास्य, ज्ञानवर्द्धक तथा मनोरंजक सुन्दर कहानियों द्वारा पाठकों को आकृष्ट करता है ।
* हमारी पुराण गाथाओं को प्रामाणिक रूप में परिचय करता है ।
* हास्यपूर्ण प्रसंगों तथा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने वाले शीर्षकों के साथ पाठकों का उत्साह वर्द्धन करता है ।
* चन्दामामा केवल आपके जीवन में ही नहीं बल्कि आपके बन्धु एवं मित्रों के जीवन में भी रचनात्मक पात्र का व्यवहार करता है । इसलिए आप अपने घनिष्ट मित्रों को चन्दामामा भेंट कीजिए ! उपहार में दीजिए !

बच्चों के लिए प्रस्तुत चन्दामामा, पाठकों में नवयौवन का उत्साह एवं आनन्द प्रदान करता है ।

तेरह भाषाओं में प्रकाशित चन्दामामा का साप किसी भी भाषा का ग्राहक बन सकते हैं !

तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अंग्रेज़ी, असामी, बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी और संस्कृत ।

वार्षिक चन्दा: रु. ३०-००

आप किस भाषा का चन्दामामा चाहते हैं, इसका उल्लेख करते हुए निम्न लिखित पते पर अपना चन्दा भेजिए:

डाल्टन एजेन्सीस

चन्दामामा बिल्डिंग्स,

वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

बुद्धिमान व्यक्ति अपने असाधारण विवेक के कारण तर्क का आश्रय लिये बिना ही बड़ी सरलता के साथ धर्म और अधर्म का निर्णय करने में सक्षम होता है। लेकिन कुछ मंद बुद्धि एवं धूर्त लोग तर्क द्वारा अपना स्वार्थ साधने की योजना बनाकर अंत में स्वयं ही उपहास का कारण बन जाते हैं। "धर्मसंकट" शीर्षक कहानी में हम बड़ी सरलता से इस सत्य की प्रतीति कर सकते हैं।

अमर वाणी

मुखं पद्मदलाकारं, वाणी चंदन शीतला।
हृदयं कर्तरीतुल्यं, त्रिविधं धूर्तलक्षणम् ॥

[मुख मंडल कमल पुष्प की भाँति सुन्दर, बातें चंदन की तरह शीतल, हृदय तेज कैंची की तरह तीक्ष्ण—धूर्तों के ये तीन लक्षण होते हैं।]

वर्ष : ३९ अप्रैल १९८७ अंक : ८

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

"काश, रसना पार्टी
हर रोज़ होती!"

रसना

कितना नारंगी-नारंगी!
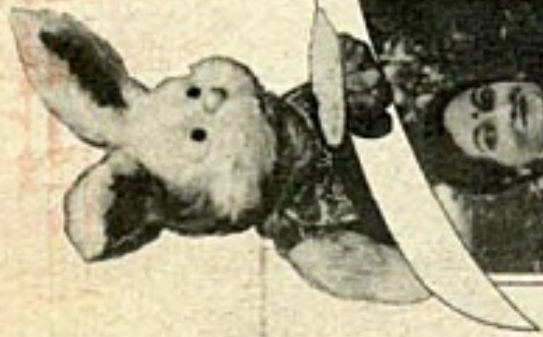
कर्रम् कुर्रम्, कुर्रम् कर्रम्...

मजेदार लज्जतदार
सात स्वाद में
लिज्जत...

लिज्जत
पापड

सात-चटपटे कुरकुरे ज़ायकेदार स्वादों में

उडद, उडद-स्पेशल, मूंग, मूंग-स्पेशल,
पंजाबी स्पेशल, लहसुन और मिर्च.

श्री महिला गृह उद्योग लिज्जत पापड

पुराण कथाः

सत्यतप

देवदत्त नाम का एक विद्वान ब्राह्मण कोसल देश में निवास करता था। बहुत काल तक उसके कोई संतान न हुई। उसने एक यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ के समय गोबिल ऋषि का मंत्रोच्चारण स्वरबद्ध न था। यह बात विद्वान देवदत्त ने गोबिल से कही। गोबिल कुपित हो उठे। उन्होंने देवदत्त को शाप दिया, "तुम मेरे मंत्रोच्चारण में दोष ढूंढ़ रहे हो ? जाओ, इस यज्ञ के फलस्वरूप तुम्हें प्राप्त होनेवाला पुत्र मूर्ख हो !"

देवदत्त व्यथित होकर गोबिल के चरणों पर गिर पड़ा। उसने अपने अपराध को क्षमा कर देने की प्रार्थना की। तब गोबिल ने उसे आशीर्वाद दिया, "तुम्हारा पुत्र पंडित तो न होगा, पर वह एक महान कवि के रूप में यश प्राप्त करेगा।"

कुछ समय बाद देवदत्त के घर में एक पुत्र ने जन्म लिया। जब वह कुछ बड़ा हुआ तो शिक्षा प्राप्त करने के लिए उसे गुरुकुल में प्रवेश कराया गया। पर वह वहाँ एक अक्षर भी नहीं सीख पाया। क्षुब्ध होकर उसने गुरुकुल छोड़ दिया और गंगा के किनारे कुटी बनाकर रहने लगा। वह बड़ी श्रद्धा एंव भक्ति से प्रतिदिन गंगा में स्नान करता और सत्य को ही अपना व्रत समझकर तपस्यापूर्वक अपना जीवन बिताता। धीरे-धीरे लोग उसे 'सत्यतप' कहकर पुकारने लगे।

एक दिन एक बहेलिया जंगली सुअर का पीछा करता हुआ उधर आ निकला। जंगली सुअर सत्यतप की कुटी में छिपकर बैठ गया। कुछ ही क्षणों में बहेलिया भी वहाँ आ पहुँचा। उसने सत्यतप से पूछा, "एक जंगली सुअर इधर आया है। क्या आपने देखा है"?

सत्यतप झूठ बोलना तो जानता ही नहीं था। सच बताने पर जंगली सुअर की जान जा सकती थी। इसी दुःखावेश में उसके मुख से इस आशय का यह मर्मस्पर्शी श्लोक निकला: "जंगली सुअर का आना आँखों ने देख लिया है, पर वे बोल नहीं सकतीं। मुख बोल सकता है पर वह सुअर को देखने में असमर्थ है।"

यह सुन्दर काव्य-मधुर श्लोक सुनते ही बहेलिये का मन बदल गया और उसने शिकार खेलना बंद कर दिया। सत्यतप की काव्य-रचना आरंभ हुई और एक कवि के रूप में उसने महान यश प्राप्त किया।

उत्तम मनुष्य

श्रीपुर के राजा विष्णुवर्मा सहृदय और जिज्ञासु प्रकृति के व्यक्ति थे। उनकी सभा में एक विदूषक भी था। विदूषक का नाम था गौतम।

एक शाम राजा वन-विहार के लिए निकले। विदूषक गौतम भी उनके साथ था। राजा विष्णुवर्मा ने विदूषक से पूछा, "बोलो, गौतम ! तुम्हारी दृष्टि में मैं कैसा मनुष्य हूँ ?"

"महाराज, आप जैसा उत्तम मनुष्य तो पृथ्वी पर होना दुर्लभ है !" विदूषक गौतम ने उत्तर दिया।

विदूषक की बात में राजा को अतिशयोक्ति प्रतीत हुई। उन्होंने पूछा, "गौतम, क्या तुम सोचते हो कि मेरे अन्दर कोई बुराई नहीं है ?"

"महाराज, आपके अन्दर भला कौन-सी है ? यदि आप किसी पर क्रोधित होते हैं तो उस समय आपकी बात कुछ कठोर अवश्य प्रतीत होती है, लेकिन सब जानते हैं कि आपका हृदय मक्खन के समान कोमल है।" गौतम ने विनयपूर्वक कहा।

विदूषक गौतम की बात से राजा के मन का समाधान नहीं हुआ। वे सोचने लगे, उत्तम मनुष्य कैसा होता है ? उसके लक्षण क्या हैं ?

उस रात राजा को नींद नहीं आयी। वे इन्हीं प्रश्नों पर गहराई के साथ विचार करने लगे। राजा को अन्यमनस्क देख रानी ने उनसे पूछा, "महाराज, आपकी चिन्ता का क्या कारण है ?"

राजा ने कहा, "मैं उत्तम मनुष्य को देखना चाहता हूँ।"

"महाराज, आप इसे एक बड़ी समस्या मानकर विचार में डूबे हुए हैं ! जो लोग अपने किसी वचन से तथा किसी कर्म से दूसरों को दुख एवं नुक़सान नहीं पहुँचाते, वे ही लोग वास्तव में उत्तम हैं।" राजा विष्णुवर्मा की बुद्धिमती रानी रुक्मिणी देवी ने कहा।

कमला वशिष्ठ

राजा को रानी की बातों में सच्चाई प्रतीत हुई। उन्होंने अपने राज्य के उत्तम मनुष्य को खोजकर उसे पुरस्कार देने का निर्णय कर लिया।

राजा विष्णुवर्मा के निश्चय को सुनकर मंत्री उदयभानु विस्मित होगया। फिर भी, मंत्री उदयभानु यह सोचकर चुप रहा कि उत्तम मनुष्य की खोज में राजा को अपने राज्य के बुरे लोगों का परिचय अवश्य प्राप्त होगा।

एक रात राजा विष्णुवर्मा और मंत्री उदयभानु छद्मवेश धारण कर निकल पड़े। उन दोनों ने इस बात का परीक्षण करना चाहा कि उत्तम मनुष्य अपनी साधारण दिनचर्या में कैसा होता है? दोनों ने ही सर्वप्रथम दो व्यक्तियों के परीक्षण का निश्चय किया। पहला व्यक्ति था राजकवि दिवाकर और दूसरा था राजवैद्य सोमदत्त।

सबसे पहले राजा और मंत्री राजकवि दिवाकर के घर पहुँचे। वे घर के पिछवाड़े से गये और खिड़की के पास अन्धेरे में खड़े होगये।

कमरे में दीवार के पास कवि दिवाकर की पत्नी रत्ना एक चारपाई पर लेटी हुई थी। दिवाकर का शिष्य चंद्राकर अपने गुरु की सेवा में लगा हुआ था। उसने चांदी की थाली में भोजन परोसा और कवि के सामने रख दिया। कवि दिवाकर ने देखा कि थाली में पानी की बूँदें लगी हुई हैं।

दिवाकर ने अपने शिष्य को पानी की वे बूँदें दिखाकर गरजकर कहा,—"चंद्राकर, जो लोग कविता का अर्थ नहीं समझते, वे तुम्हें मेरे बराबर का या मुझसे भी श्रेष्ट कवि कहने लगे हैं। क्या इसीलिए तुम अहंकार में प्रमत्त होगये हो? क्या तुम इतने अंधे होगये हो कि तुम्हें थाली में पड़ी पानी की बूँदें भी न दिखाई दीं?" यह कहकर दिवाकर ने चंद्राकर को पीटने के लिए अपना हाथ उठाया।

चंद्राकर काँप उठा। उसने थाली को फिर से साफ़ किया और भोजन परोसा। इस बीच कवि दिवाकर की पत्नी रत्ना पीड़ा के कारण कराह उठी

फिर क्या था, कवि दिवाकर ने अपनी क्रोधभरी दृष्टि पत्नी की तरफ़ डाली और चीखकर कहा, "रत्ना, क्या चार दिन के बुखार में इतनी भयानक पीड़ा होती है? तुम इतना कराहती क्यों हो? न मुझे खाने देती हो न सोने देती हो! न मालूम मैंने पिछले जन्म में कौनसे पाप किये थे कि तुम जैसी विभूति मुझे पत्नी के रूप में मिली है?"

दरबार में सौम्य और मधुर बने रहनेवाले राजकवि दिवाकर का यह वास्तविक रूप देख राजा विष्णुवर्मा स्तम्भित होगये। मंत्री उदयभानु को भी कम आश्चर्य नहीं हुआ। इसके बाद वे दोनों राजवैद्य सोमदत्त के यहाँ पहुँचे। सोमदत्त जिस कुटी में दवाइयाँ बना रहा था, वहाँ से कुछ ध्वनियाँ निकल रही थीं। राजा और मंत्री कुटी की दीवार से सटकर खड़े होगये और खिड़की के अन्दर से भीतर की ओर झाँक कर देखने लगे।

वैद्य सोमदत्त का पुत्र रविदत्त खरल में तरह-तरह की जड़ी-बूटियाँ डालकर उन्हें पीस रहा था। उसके चेहरे पर खीज के चिन्ह स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। वैद्य सोमदत्त बड़ी तीक्ष्ण दृष्टि से अपने पुत्र की तरफ़ देख रहा था।

कुछ क्षण इसी तरह बीत गये। अचानक सोमदत्त ने कहा, "बेटा रवि, तुम्हें मेरे कहे अनुसार ही करना होगा।"

रवि बूटियाँ पीसते हुए बोला, "पिताजी, आप जो करने को कह रहे हैं, वह मुझे बिलकुल पसन्द नहीं है।"

यह उत्तर सुनकर राजवैद्य सोमदत्त ने दांत पीसकर कहा, "रवि, मैं जानता हूँ कि वैद्य शास्त्र में तुम मुझसे आगे निकल गये हो। लेकिन, तुम धन का मूल्य न समझनेवाले एक मूर्ख हो! दमे की बीमारी के लिए हमने जिस दवा का आविष्कार किया है, उसका परिचय राजा को देने से हमारा कौन सा फ़ायदा होनेवाला है? वे हमें यह आदेश देंगे कि इस दवा को हम रोगियों में मुफ़्त बाँट दें। अगर हम अपनी इस खोज को गुप्त रखें और इस नुस्खे को पड़ोसी राज्य से आये हुए व्यापारी के हाथ गुप्त रूप से बेच दें तो हमें सहज ही दस हज़ार स्वर्ण मुद्राओं की प्राप्ति हो जायेगी। समझे!"
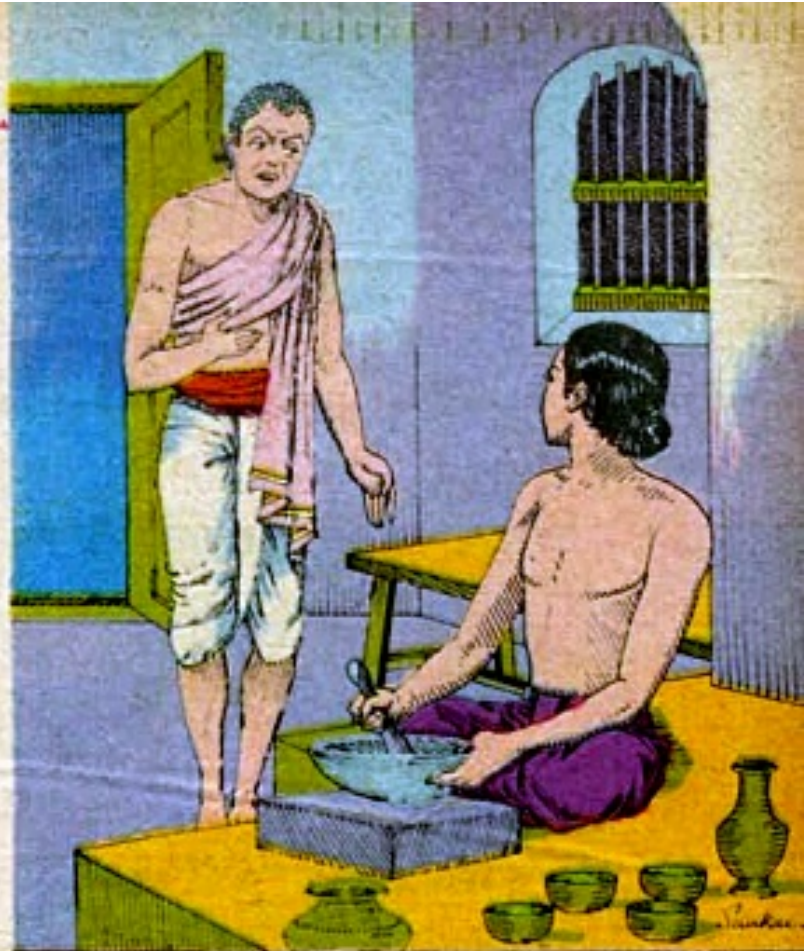
यह जवाब सुनकर राजा विष्णुवर्मा यह विचार करते हुए आगे बढ़े कि राजभक्ति दिखलाने वाला मेरा राजवैद्य क्या सचमुच इतने नीच स्वभाव का है?

मंत्री उदयभानु ने चुपचाप राजा का अनुसरण किया। चलते-चलते दोनों नगर के बाहर पहुँचकर एक खेत की मेंड़ पर बैठ गये। पास में ही एक झोंपड़ी थी। उसके भीतर से किसी नारी के रोने की आवाज़ आ रही थी।

भूल गया और व्यथित होकर बोला, "अरी लक्ष्मी, क्या हुआ तुझे ?"

"कुएँ से पानी भर कर ला रही थी। पैर फिसलकर गिर पड़ी, घड़ा भी टूट गया। मेरे दायें पैर में मोच आगयी है। इसलिए अभी तक मैंने चूल्हा भी नहीं जलाया है।" लक्ष्मी ने जवाब दिया।

रामदीन सब सुनकर दुखी हो उठा और बड़े प्रेम से अपनी पत्नी से बोला, "लक्ष्मी, तू चिन्ता मत कर! चूल्हा भी मैं जला लूँगा और रसोई भी बना लूँगा। तू हिल-डुल भी मत और चुपचाप लेटी रह। मैं गरम पानी लाता हूँ। मोच पर सेंक देने से आराम मिलेगा और तुम सुबह तक चलने-फिरने लायक़ हो जाओगी।" यह कहकर रामदीन ने रसोई में जाकर चूल्हा जलाया और पानी गरम करने रखा।

इसके बाद रामदीन ने सबसे पहले अपनी पत्नी के पैर की सिकाई की। इसके बाद उसने रोटी बनाकर पहले लक्ष्मी को खाना खिलाया, फिर खुद खाया।

लक्ष्मी ने पूछा, "आज तो रात होगयी! तुम इतनी देर करके घर क्यों लौटे ?"

"हमारा जो अनाज बचा था न, उसे मैं बेचना चाहता था। पर सौदा जल्दी नहीं पटा। बाहर शहर से एक साहूकार आया था। वह एक बोरे पर पाँच सिक्के ज़्यादा देने के लिए कह रहा था। पर मैंने काफ़ी सोच-विचार किया और अपने नगर के ही व्यापारी के हाथ सारा अनाज बेच

राजा और मंत्री उठ खड़े हुए और झोंपड़ी के पास पहुँचे। झोंपड़ी के पीछे का दरवाज़ा खुला हुआ था। उन्होंने देखा कि एक खाट पर एक औरत लेटी हुई है। वे दोनों सोच ही रहे थे कि उस औरत की पीड़ा और उसके रोने का कारण पूछें कि इस बीच झोंपड़ी के सामनेवाले द्वार को खोलकर एक आदमी झोंपड़ी के अन्दर आया।

उस आदमी को देखते ही वह औरत कराह कर बोली, "आह, मेरा पैर बड़ी ज़ोर से दर्द कर रहा है!"

झोंपड़ी के भीतर आया हुआ व्यक्ति उस औरत का पति था। उसका नाम रामदीन था। वह एक किसान था और दिन भर खेत पर काम करके थक गया था।

पत्नी की कराह सुनकर वह अपनी थकान

दिया ।'' रामदीन ने कहा ।

''ऐसा क्यों किया ? हम एक बोरे पर पाँच सिक्के कम क्यों लें ? इससे हमारा नुक़सान होता है न ?'' लक्ष्मी ने कुछ रुष्ट होकर कहा ।

रामदीन धीरे से हँस पड़ा, फिर बोला, ''अगर मैं पाँच सिक्कों के लालच में आकर बाहर के व्यापारी के हाथ अपना अनाज बेच देता तो पता है क्या होता ? अभी जो नुक़सान मैंने उठाया, उससे कहीं अधिक नुक़सान हमारे चारों तरफ़ के गाँवों के लोग उठाते । इस वर्ष फ़सल बहुत कम हुई है । अगर मैं बाहर के उस व्यापारी को अनाज बेच देता, तो जानती हो, वह क्या करता ? वह सारा अनाज थोड़े से मुनाफ़े के लिए हमारे शत्रु बने पड़ोसी राज्यों को बेच डालता । मैंने कम लाभ पर ही अभी जिस व्यापारी को अनाज बेचा है, वह अपने देश के साथ ऐसी दुष्टता कभी नहीं करेगा । वह ज़रूरतमन्द लोगों को उचित मूल्य पर अनाज बेचेगा ।''

पति का जवाब सुनकर लक्ष्मी को संतोष होगया । उसने स्वीकृति में अपना सिर हिलाया ।

इसके बाद राजा विष्णुवर्मा और मंत्री उदयभानु वहाँ से निकल पड़े । रास्ते में राजा ने कहा, ''अब मैं समझ गया कि उत्तम मनुष्य कैसा होता है ? यह किसान वचन और कर्म तथा विचार से भी उत्तम मनुष्य है ।''

''और महाराज, आपने राजकवि दिवाकर और राजवैद्य सोमदत्त के बारे में क्या सोचा है ?'' मंत्री ने पूछा ।

''मेरा यह निर्णय है कि राजकवि दिवाकर के शिष्य चंद्राकर को राजकवि का पद दिया जाये और राजवैद्य सोमदत्त के पुत्र रविदत्त को राजवैद्य का । दोनों में ही इस किसान की भाँति दया, धर्म और देशभक्ति है । मैं किसान का राजकीय सम्मान करके उसे 'उत्तम मनुष्य' का पुरस्कार देना चाहता हूँ ।'' राजा विष्णुवर्मा ने कहा ।

एक सप्ताह बाद राजा विष्णुवर्मा ने अपने निर्णय के अनुसार चंद्राकर और रविदत्त को क्रमशः राजकवि और राजवैद्य के पद पर नियुक्त किया एवं सभा में किसान रामदीन का राजकीय अभिनन्दन किया ।

धर्मसंकट

एक बार इंद्रपुर गाँव में एक विद्वान पंडित का आगमन हुआ, नाम था विश्वम्भर शर्मा। विश्वम्भर धर्मशास्त्रों में पारंगत और प्रवचन में कुशल थे। गाँव के बुजुर्गों ने विश्वम्भर से शास्त्रों पर प्रवचन करने का अनुरोध किया। विश्वम्भर ने स्वीकार कर लिया। गाँव के शिवालय में सभा का उचित प्रबन्ध किया गया।

पहले दिन विश्वम्भर ने शास्त्रों के अनुसार धर्म की व्याख्या की और अनेक उदाहरणों से अपने भाषण में प्राण भर दिये। अन्त में उन्होंने कहा, "पाप केवल पापाचरण को ही नहीं कहते, उसमें सहयोग देने को भी कहते हैं। उदाहरण के लिए जिस प्रकार मद्यपान करना पाप है, वैसे ही मद्यपान करनेवालों के साथ संपर्क रखना, उन्हें सहायता या किसी प्रकार का प्रोत्साहन देना भी पाप ही मानना चाहिए।"

दूसरे दिन विश्वम्भर ने अपने प्रवचन में कहा, "मनुष्य को कैसी भी स्थिति में असत्य नहीं बोलना चाहिए।" उन्होंने इस प्रसंग में राजा हरिश्चंद्र की कहानी सुनाकर सबके हृदय को द्रवित कर दिया।

विश्वम्भर शर्मा अपना प्रवचन समाप्त करके अपने आतिथेय गाँव के मुखिया गौरीनाथ के घर की तरफ़ बढ़ने लगे। रास्ते में अनन्तराम नाम के एक युवक ने उन्हें प्रणाम करके कहा, "पंडितजी, आपने धर्म की अनेक सूक्ष्म बातों को मर्मस्पर्शी शैली में प्रकट किया है। मैं अपने जीवन को उनके अनुरूप ढालने का प्रयत्न करूँगा!" यह कहकर अनन्तराम चला गया।

युवक अनन्तराम की बात सुनकर पं॰ विश्वम्भर शर्मा को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। वे साथ आरहे मुखिया गौरीनाथ से बोले, "आज के ज़माने में किसी आदर्श का पालन करनेवाले युवकों का नितान्त अभाव होगया है। ऐसी स्थिति

रामलाल पारीक

में अनन्तराम की प्रशंसा करनी होगी, जो सुने हुए को अमल में लाने का इच्छुक है ।"

मुखिया गौरीनाथ ने मुस्कराकर कहा, "आपने अनन्तराम की बात पर एकदम विश्वास कर लिया ! यह एक शरारती युवक है और गाँव के बड़े-बूढ़ों के प्रति बिलकुल श्रद्धा नहीं रखता। मुझे तो पूरा सन्देह है कि यह कोई अवसर ढूँढ़कर आपकी मज़ाक उड़ाना चाहता है ।"

विश्वम्भर कुछ क्षण मौन रहकर बोले, "आदमी का यह स्वभाव होता है कि वह दूसरे की सच्चाई पर विश्वास नहीं करना चाहता। पर मेरा विश्वास है कि अनन्तराम ने जो कुछ कहा है, वह सच है और उसने मेरे प्रवचन को पूरी तरह हृदयंगम किया है ।"

दूसरे दिन प्रातःकाल विश्वम्भर शर्मा गौरीनाथ के चबूतरे पर बैठकर किसी से बात कर रहे थे कि अनन्तराम ने प्रवेश करके उन्हें प्रणाम किया। फिर वह बोला, "पंडितजी, मैं आज बड़े धर्मसंकट में फँस गया हूँ। इस संकट से बाहर निकलने का उपाय भी आपको ही बताना होगा।"

विश्वम्भर ने पूछा, "बोलो, बताओ, वह कौनसा धर्मसंकट है ?"

"पंडितजी, आज सुबह जब मैं खेत से लौट रहा था तो रास्ते में मुझे दो शराबी मिले। वे इस गाँव के नहीं थे। वे मुझे तंग करने लगे कि मैं उन्हें इस गाँव के शराबख़ाने का रास्ता बताऊँ। मैंने आपके मुँह से सुना था कि शराब पीने की तरह ही शराबियों की मदद करना भी पाप है। इसलिए मैंने उन्हें बताया कि मैं शराबख़ाने का रास्ता नहीं जानता हूँ। पर पंडितजी, मैं तो जानता हूँ कि शराबख़ाना कहाँ पर है। बाद में जब मैंने इस घटना पर विचार किया तो मुझे लगा कि मैंने झूठ का सहारा लिया है। वे शराबी भी अभी तक सड़कों पर भटक रहे हैं।" अनन्तराम ने कहा।
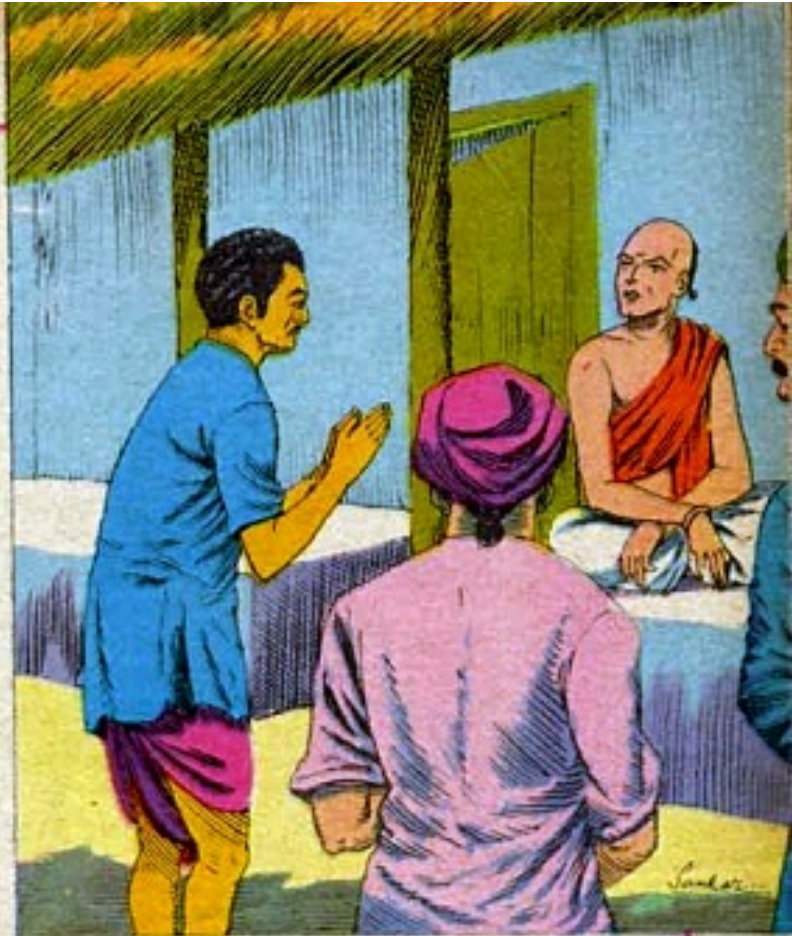
विश्वम्भर ने कुछ हँसकर कहा, "इसमें धर्मसंकट की कोई बात नहीं है। तुमने जो कुछ किया, ठीक किया। बुरे काम करनेवाले को रोकने के लिए बोला गया वचन या किया कर्म धर्मसंगत ही कहलाता है ।"

विश्वम्भर का उत्तर सुनकर अनन्तराम ज़ोर से बोलने लगा, "अरे, आप भी कैसे पंडित हैं ? शराबख़ाने का पता बतायें तो यह काम शराबियों

को प्रोत्साहन देने में आजायेगा, लेकिन पता मालूम होने पर भी 'नहीं मालूम है' ऐसा कह दें तो वह झूठ बोलना हो जायेगा। ऐसे समय क्या करना चाहिए, क्या यह बात शास्त्रों में नहीं बतायी गयी है ?''

मुखिया गौरीनाथ को पहले ही सन्देह था। अब बाहर शोर सुना तो वह समझ गया कि अनन्तराम ने विश्वम्भर के सामने अवश्य ही कोई बखेड़ा खड़ा किया है। इस बीच कुछ लोग बाहर जमा भी होगये थे।

अनन्तराम ने गौरीनाथ को अपना हाल बताकर कहा, ''मुखिया जी, ये कैसे पंडित हैं जो ऐसे मामूली से धर्मसंकट से मुक्ति पाने का उपाय भी नहीं बता सकते ? ये इतने साधारण से मार्गदर्शन में असमर्थ हैं, फिर भी, हम हर रोज़ इनका प्रवचन सुनते हैं और भेड़ों की भाँति सिर हिलाते हैं।''

गौरीनाथ ने शांतिपूर्ण स्वर में कहा, ''जो कुछ हुआ, उसके लिए पंडितजी की निंदा क्यों करते हो ? तुम जिसे धर्मसंकट कहते हो, उससे उबरने का रास्ता भी तुम्हारे हाथोंा में है।''

''अच्छा, ऐसी बात है! क्या वह रास्ता आप मुझे बतायेंगे ?'' अनन्तराम ने विस्मित होकर प्रश्न किया।

''तुम इसी समय जाओ और उन शराबियों से मिलकर कहो— 'मैं शराबख़ाने का रास्ता जानता हूँ, लेकिन मैं तुम्हें बताना नहीं चाहता।' उन्हें यह जवाब देकर तुम अपने घर जाओ, तुम्हारा धर्मसंकट स्वयं ही दूर हो जायेगा।''

वहाँ जो लोग एकत्रित होगये थे, वे गौरीनाथ की बातों का समर्थन करते हुए तालियाँ बजाने लगे। उनकी हँसी से अनन्तराम का सिर शर्म से झुक गया और वह वहाँ से चला गया।

अब विश्वम्भर शर्मा ने कहा, ''धर्मसंकट खड़ा करनेवाले अनन्तराम जैसे लोगों से निपटने के लिए मेरा पांडित्य कम पड़ गया। वास्तव में ऐसी समस्याओं के हल में पांडित्य की नहीं व्यावहारिक ज्ञान की ज़रूरत है। इस क्षेत्र में मुखिया गौरीनाथ जैसे व्यक्ति ही सफल हो सकते हैं।''

[११]

[जब चित्रसेन को यह समाचार मिला कि राजद्रोही नागवर्मा दुर्ग के समीप पहुँच रहा है, तब उसने और उग्राक्ष ने अपने सैनिकों एवं सेवकों को दुर्ग के अन्दर छिपे रहने का आदेश दिया। करवीर ने नागवर्मा को सलाह दी कि पहले यह जानना उचित होगा कि दुर्ग में दुश्मन छिपा तो नहीं बैठा है! इसके लिए दुर्ग में पहले कुछ सैनिकों को भेजना उचित समझा गया ताकि वे अवगत होकर अगला कदम उठा सकें। आगे पढ़िये ...]

नागवर्मा ने करवीर की सलाह का स्वागत किया और उसके अनुसार ही कार्यवाही करने का निश्चय किया। इसका एक कारण यह भी था कि वह दुर्ग में सबसे पहले स्वयं प्रवेश नहीं करना चाहता था। पहले वह अपने सैनिकों की प्रतिक्रिया जानना चाहता था और जब किसी प्रकार की आशंका न हो, तभी दुर्ग में प्रवेश करना चाहता था। थोड़ी देर वह खड़ा रहा, फिर उसने दुर्ग के ध्वस्त द्वार को देखा और करवीर की ओर मुड़कर कहा, "करवीर, तुम्हारा परामर्श समय के अनुरूप है। हम ऐसा ही करेंगे।" इतना कहकर उसने अपने घोड़े को पीछे की ओर घुमाया और सैनिकों से बोला, "तुम लोग निर्भय दुर्ग में प्रवेश करो। यह तो बहुत ही सौभाग्य की बात है कि हम लोग युद्ध के बिना ही दुर्ग पर अधिकार कर सकते हैं। न्याय और धर्म हमारे पक्ष में है, इसीलिए भगवान ने हमें यह अवसर प्रदान किया है। यह ठीक है कि हमें धवलगिरि

में पराजय का मुँह देखना पड़ा, पर अब हमें विजय का मौक़ा मिला है और हम अवश्य ही उसे प्राप्त करेंगे। वीरो, तुमने नागवर्मा का साथ दिया है और इसके लिए तुम्हें पुरस्कृत किया जायेगा।"

नागवर्मा के आदेश का मिलना था कि सैनिक दुर्ग के ध्वस्त द्वारों से भीतर प्रवेश करने लगे। नागवर्मा तथा करवीर घोड़ों को इधर-उधर घुमाते हुए चेतावनी देने लगे, "जल्दी करो! क़िले की दीवारों की सेंधों तथा बुर्जियों की मरम्मत करके हमें युद्ध के लिए तैयार होना है। तारकेश्वर की सेना शीघ्र ही हमें घेर सकती है।"

थोड़ी ही देर में सारी सेना दुर्ग के भीतर प्रवेश कर गयी। नागवर्मा और करवीर कुछ देर तक बाहर ही इन्तज़ार करते रहे कि शायद क़िले के भीतर किसी प्रकार का शोरगुल हो। पर वहाँ कोई हलचल न पाकर उनकी हिम्मत बढ़ गयी।

नागवर्मा ने कहा, "हम व्यर्थ ही डर गये थे। वास्तव में दुर्ग में कोई दुश्मन नहीं है। शंका भी कैसी बुरी चीज़ है। हम तरह-तरह का विचार करते रहे और यहाँ चिड़िया का भी पता नहीं है। फिर भी हमें सावधान रहना है और किसी भी तरह के ख़तरे के लिए तैयार होना है। सबसे पहले अब हमें दुर्ग की रक्षा और मरम्मत के काम में लगना चाहिए।"

करवीर ने स्वीकृति देते हुए सिर हिला दिया। इसके बाद दोनों दुर्ग की ध्वस्त दीवारों के बीच से अपने घोड़ों को आगे बढ़ाने लगे। अभी वे दोनों क़िले के अन्दर कुछ ही दूर पहुँचे थे कि अचानक सेना में हलचल मच गयी। "राक्षस! राक्षस!" चिल्लाते हुए कुछ सैनिक बाहर निकलने के लिए भागने लगे।

"महाराज, धोखा है, दग़ा है। हम लोग इनका सामना नहीं कर सकते। इस समय तो किसी तरह जान बचाकर भाग निकलना चाहिए। फिर मौक़ा मिला तो इनका ख़ात्मा किया जायेगा। आप घोड़े को वापस मोड़ लीजिए!" यह कहकर करवीर ने अपने घोड़े का मुँह पीछे की तरफ़ घुमा लिया।

"क्या कहा? दग़ा है! धोखा है!" यह कहकर नागवर्मा ने भी अपने घोड़े को मोड़ लिया और दुर्ग के सामनेवाले मैदान की तरफ बढ़ा

दिया ।

"द्रोही नागवर्मा भाग रहा है। जंगल में प्रवेश करने से पहले उसे पकड़ना है ।" चित्रसेन की यह पुकार नागवर्मा के कानों में गूंज उठी। दूसरे ही क्षण राक्षसों का अट्टहास सुनाई दिया और कुछ पाषाणी गदाएं बड़ी तीव्र गति के साथ करवीर और नागवर्मा के घोड़ों की बगल से निकल गयीं।

करवीर के भय का कोई ठिकाना न रहा। वह काँप कर बोला," महाराज, राक्षस समझ गये हैं कि हमें वे लोग जीवित बन्दी नहीं बना पायेंगे। इसलिए हमें मारने के लिए हम पर शिलाओं से बनी गदाएं फेंक रहे हैं। हमारे लिए हितकर होगा कि हम जल्दी से जल्दी जंगल में पहुँच जायें।"

"अरे कैसा द्रोह है! कैसा अन्याय है!" इस प्रकार नागवर्मा पागल की तरह चिल्लाता हुआ घोड़े को सरपट दौड़ाने लगा। इसी बीच उग्राक्ष ने अपनी गदा को फेंका। वह गदा करवीर के घोड़े पर जा लगी। घोड़ा ज़ोर से हिनहिनाया और धम्म से आगे की तरफ़ गिर पड़ा। घोड़े पर सवार करवीर लगाम की पकड़ ढीली पड़ जाने के कारण गेंद की तरह हवा में उछल गया।

करवीर की चिल्लाहट सुनकर नागवर्मा ने घोड़े को रोका और पीछे की तरफ़ मुड़कर देखा। उग्राक्ष की गदा के आघात से करवीर के घोड़े की पिछली दो टांगें टूट गयी थीं, इसलिए वह ज़मीन पर लोटता हुआ तड़प रहा था। कुछ दूर पेड़ों के झुरमुट में जा गिरा करवीर तीर की तरह उठ खड़ा हुआ और "महाराज! महाराज!" चिल्लाता हुआ नागवर्मा के पास दौड़ता हुआ आया।

नागवर्मा दुर्ग की ओर दृष्टि दौड़ाकर बोला, "हम अगर यहाँ कुछ क्षण भी और रुके रहे तो हम ज़िन्दा नहीं बच सकते। हमारी पूरी सेना दुर्ग के अन्दर ख़त्म हो चुकी है। जो थोड़े से सैनिक बच गये हैं, वे हमारी तरफ़ दौड़े आरहे हैं।"

करवीर ने भी सिर घुमाकर उधर देखा। कुछ सैनिक चिल्लाते हुए जंगल की तरफ़ दौड़े हुए आरहे थे। कुछ राक्षस तथा चित्रसेन के सैनिक उनका पीछा कर रहे थे।

"करवीर, क्या हम दुश्मन से बचकर भाग सकते हैं? क्या ख़तरे की इस घड़ी को टाला जा सकता है? हमें उम्मीद नहीं थी कि दुश्मन ऐसी

गहरी चाल चलेगा। अब क्या करें? तुमने अपना घोड़ा भी खो दिया है।" नागवर्मा ने हताश होकर कहा।

"महाराज, शत्रु ने हमें पकड़ने के लिए जो चाल चली थी, वह सफल होगयी है। अब हम घोड़ों पर भी कैसे भागेंगे? हमें भी कोई चाल चलनी होगी। दुश्मन की दृष्टि को दूसरी ओर ले जाना होगा। देखिए, हमारे दो सैनिक आरहे हैं। हम शत्रु का सारा ध्यान उन पर केंद्रित करवा सकें तो बात बन सकती है। हम उन्हें अपना घोड़ा देदेते हैं और कह देते हैं कि वे जंगल की तरफ़ भाग जायें। उन्हें भागते देख शत्रु समझेगा कि हम दोनों भाग रहे हैं। वह इनका पीछा करेगा। तब मौक़ा पाकर हम दूसरी दिशा में भाग जायेंगे और इस तरह शायद अपने प्राणों की रक्षा कर पायेंगे।" करवीर ने अपनी तरक़ीब बतायी।

करवीर का सुझाव नागवर्मा को बहुत ही उपयुक्त प्रतीत हुआ। वह तुरन्त घोड़े से उतर पड़ा और उसने अपने पास आये दो सैनिकों को उस घोड़े पर सवार होने का आदेश दिया और उनके सीरों पर अपना तथा करवीर का शिरस्त्राण रखकर बोला, "सुनो, तुम दोनों पीछे मुड़े बिना भाग जाओ! राक्षस और चित्रसेन के सैनिक पीछा करते हुए आ रहे हैं। जल्दी करो!" यह कहकर उसने अपनी म्यान से घोड़े पर पीछे से प्रहार किया। घोड़ा दौड़ पड़ा।

करवीर ने देखा, चित्रसेन के सैनिक भारी संख्या में चले आरहे हैं। उनमें से कुछ सैनिकों ने नागवर्मा के अनुचरों को जब घोड़े पर भागते हुए देखा तो वे ज़ोर से चिल्ला उठे, "अरे देखो, नागवर्मा और करवीर भाग रहे हैं। जल्दी करो! पकड़ो और बन्दी बनाओ! यह अवसर चूकना नहीं चाहिए। नागवर्मा को जीवित पकड़ने का पुरस्कार, मालूम है, क्या है? राजा वीरसिंह का आधा राज्य। और मुर्दा पकड़ने का पुरस्कार है एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएं!"

यह चिल्लाहट सुनकर करवीर मुस्कराकर नागवर्मा से बोला, "महाराज, हमारी चाल चल गयी है। अब हम दूसरी तरफ़ पश्चिम की दिशा में भाग सकते हैं।"

इसके बाद नागवर्मा और करवीर पेड़ों की ओट में छिपते और चित्रसेन के सैनिकों से अपने

CHITRA

में सफल नहीं हो सके। वे दोनों जंगल में ग़ायब होगये हैं। देखते ही देखते वे किधर खो गये, कुछ पता ही नहीं लगा। ऐसा लगता है कि उन्हें इस जंगल की पूरी जानकारी है।"

चित्रसेन ने निराश होकर कहा, "वह दुष्ट नागवर्मा हमारे हाथों से बच निकला है।"

"महाराज, नागवर्मा एवं करवीर को बन्दी बनाने की जिम्मेदारी मुझ पर छोड़ दीजिए! मैं अभी अपने अनुचरों को सारा जंगल छानने का आदेश देता हूँ।" उग्राक्ष ने कहा।

इसके बाद उग्राक्ष का संकेत पाते ही उसके अनुचर हथियार लेकर जंगल में चारों तरफ़ दौड़ पड़े।
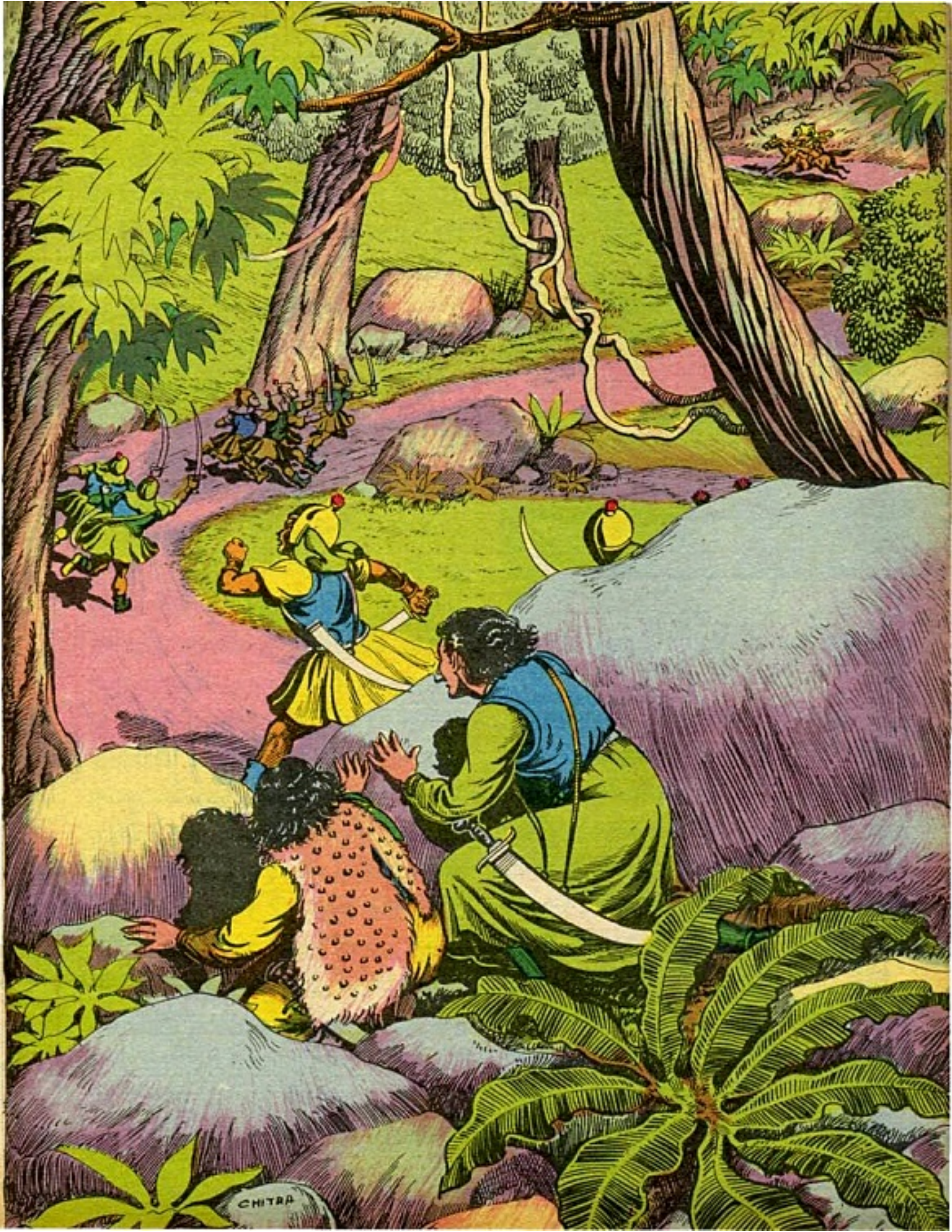
को बचाते हुए धीरे-धीरे घने जंगल के बीच भाग गये।

चित्रसेन और उग्राक्ष दुर्ग के द्वार पर खड़े थे। वे बन्दी बने शत्रु-सैनिकों से उनके नेता के बारे में सवाल कर रहे थे। पर उन्हें कुछ मालूम होता, तब तो वे कुछ बताते। शत्रुसैनिकों को इस बात का बिलकुल पता न था कि नागवर्मा और करवीर चाल चल कर सुरक्षित जंगल में भाग गये हैं। जो शत्रुसैनिक घोड़े पर सवार होकर भागे थे और जिन्हें उग्राक्ष एवं चित्रसेन के सैनिकों ने भ्रम के कारण नागवर्मा और करवीर समझ लिया था और उनका पीछा किया था, चित्रसेन के वे सैनिक भी लौट आये थे। उन्होंने चित्रसेन से निवेदन किया, "महाराज, हम नागवर्मा और करवीर को पकड़ने

कुछ ही देर बाद चित्रसेन के पिता महाराज तारकेश्वर एवं चित्रसेन का सेनापति अजयसिंह अपने दलबल के साथ वहाँ आ पहुँचे। महाराज तारकेश्वर को यह सुनकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि उनका पुत्र चित्रसेन किसी की सहायता के बिना ही कपिलपुर दुर्ग पर अधिकार कर चुका है और विजय एवं यश का भागी बना है। लेकिन, उन्हें इस बात का दुख भी हुआ कि दुष्ट नागवर्मा जीवित भाग निकला है।

कुछ ठहरकर महाराज तारकेश्वर बोले, "उस दुष्ट नागवर्मा का जीवित रहना हमारे लिए सदा संकट का कारण है। ज्वालाद्वीप के बाघचर्मधारियों के साथ उसकी गहरी मैत्री है। वह कभी भी उन भयंकर पक्षियोंवाले लोगों की मदद से हम पर आक्रमण कर सकता है। उन पक्षियों पर

विजय पाना असंभव कार्य है।"

यहाँ उपस्थित सभी लोग इस एक ही डर का शिकार थे। फिर भी सबको यह भरोसा हो रहा था कि उग्राक्ष के द्वारा भेजे गये राक्षस योद्धा उन दोनों द्रोहियोंको अवश्य ही पकड़ लायेंगे।

इसके बाद कपिलपुर के राजा वीरसिंह से चित्रसेन ने अपने पिता का परिचय कराया। वीरसिंह ने तारकेश्वर के सामने उनके पुत्र चित्रसेन की प्रशंसा के पुल बांध दिये और कहा, "चित्रसेन के कारण ही आज मैं जीवित और स्वतंत्र हूँ। मैं अब राज्य के कार्यभार से भी मुक्त होना चाहता हूँ। मेरे कोई पुत्र नहीं है, केवल एक पुत्री है। महाराज तारकेश्वर, मैं आपके साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहता हूँ और विश्राम पाना चाहता हूँ। आशा है आप मेरा निवेदन स्वीकार करेंगे।"

तारकेश्वर ने इस वार्तालाप के पहले ही राजकुमारी कांतिमती को देख लिया था। सैनिकों की बातचीत से वे यह भी समझ गये थे कि उनका बेटा चित्रसेन राजकुमारी कांतिमती के प्रति आकर्षित है। इस विवाह से न केवल चित्रसेन को अपनी प्रिया पत्नी प्राप्त होगी, बल्कि उसका राज्य भी दुगुना हो जायेगा। महाराज तारकेश्वर ने चित्रसेन और कांतिमती के विवाह को बड़ी प्रसन्नतापूर्वक अपनी स्वीकृति प्रदान की। महाराजा तारकेश्वर की स्वीकृति मिलते ही वहाँ उपस्थित सारे लोगों में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी।

विवाह का मुहूर्त शीघ्र ही निश्चित किया गया। विवाह के शुभ अवसर पर चित्रसेन ने सैनिकों एवं सेनानायकों को अनेक बहुमूल्य पुरस्कार प्रदान किये एवं चित्रसेन अपने सहयोगी और उपकारी उग्राक्ष को भी कोई अमूल्य उपहार देना चाहता था। चित्रसेन समझ नहीं पा रहा था कि उग्राक्ष को किस पुरस्कार से प्रसन्नता मिल सकती है? वह मनुष्य जाति का प्राणी तो था नहीं कि उसकी पसन्द-ना पसन्द को आसानी से समझा सके। इसीलिए चित्रसेन के मन में असमंजस-सा था। फिर भी, वह उसे कुछ देना अवश्य चाहता था। उसने इसी विचार से प्रेरित होकर उग्राक्ष से कहा, "उग्राक्ष, तुमने मेरी जो मदद की है, उसे मैं कभी नहीं भूल सकता। मैं और रानी कांतिमती

दोनों ही तुम्हारे प्रति कृतज्ञ हैं। आज के इस मंगल मुहूर्त में तुम कुछ माँगो ! तुम जो भी पुरस्कार चाहोगे, मैं अवश्य दूँगा ।"

"महाराज, आपने एक बार वचन दिया था। आज फिर से सोच लीजिए ! मैं जिस पुरस्कार की कामना करता हूँ, वह आपके मन को दुखी कर सकता है ।" उग्राक्ष ने कहा ।

"मैंने वचन दिया है । तुम निश्चिन्त होकर माँगो ।" चित्रसेन ने आग्रह दिखाया ।

"महाराज, मैंने पहले ही दिन आपसे यह माँगा था कि आप अपने ज्येष्ठ पुत्र को अट्ठारह वर्ष की आयु होने पर मेरे हाथ सौंप देंगे। लेकिन अब मैं कुछ कारणों से अपना यह विचार बदलना चाहता हूँ। अब मेरी इच्छा है कि आपकी प्रथम संतान, चाहे वह लड़का हो या लड़की, उसे आप पाँच वर्ष की आयु में ही मुझे दे दें। क्या आपको स्वीकार है ? मेरी यही एक मांग है, महाराज !" उग्राक्ष ने कहा ।

राक्षस उग्राक्ष की कामना सुनकर चित्रसेन को पुनःआघात लगा। पर वह शीघ्र ही संभल गया। वचन तो वह बहुत पहले ही दे चुका था अब इससे क्या अन्तर पड़ता है कि वह संतान अट्ठारह वर्ष की आयु में उग्राक्ष को सौंपी जायेगी या पाँच वर्ष की उम्र में! उसे अपनी एक संतान से वंचित तो होना ही है। फिर उग्राक्ष तो मित्र है, शत्रु नहीं।

सब कुछ सोचकर चित्रसेन ने गंभीर होकर कहा, "उग्राक्ष तुम्हारी इच्छा पूरी होगी ! मुझे स्वीकार है ।"

चित्रसेन की स्वीकृति पाकर उग्राक्ष प्रसन्नता के कारण उछल पड़ा। बोला, "महाराज, मैं हमेशा के लिए आपका दास हूँ।" यह कहकर उग्राक्ष ने चित्रसेन को नमस्कार किया । फिर वह अपने सेवकों की ओर मुड़कर हुंकार उठा, "अरे , तुम सब लोग यहीं हो न!" तुमने हमारा जो उपकार किया और वक्त पर मदद दी, उसे हम कभी भूल नहीं सकते। मैं विश्वास है कि आप अवश्य अपने वचन का पालन करेंगे। क्षत्रिय कभी अपने वचन से नहीं मुकरते। इसलिए मित्र की कामना की पूर्ति करनी ही चाहिए ।

(क्रमशः)

दो देवियाँ
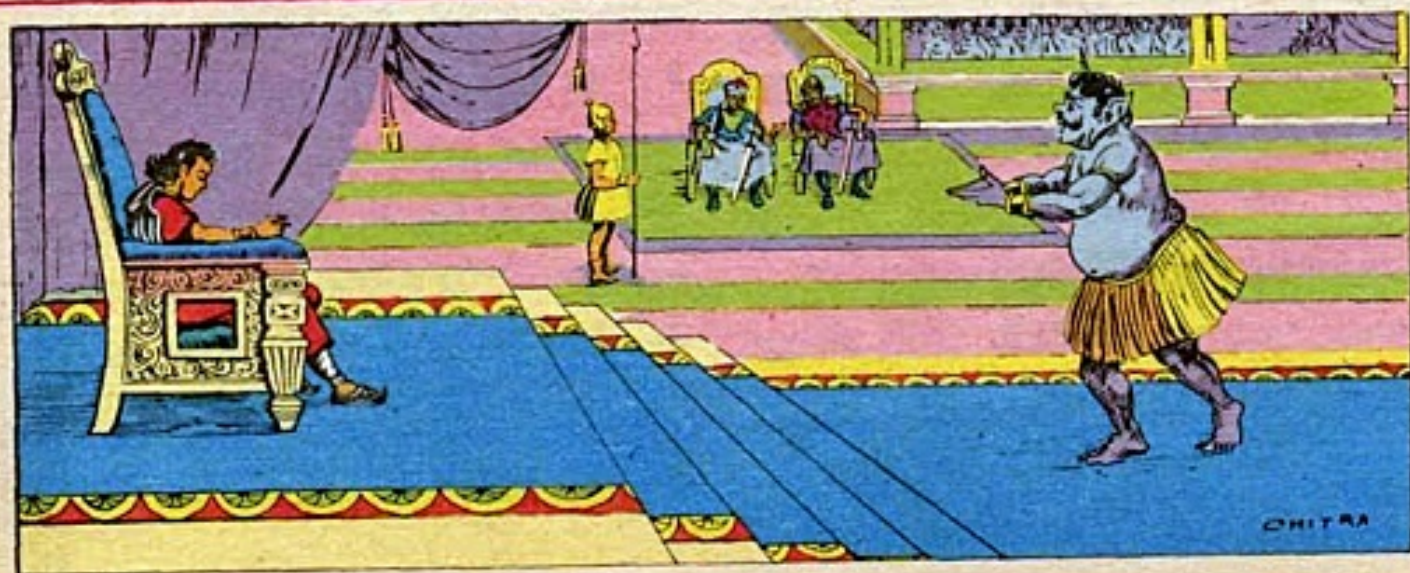
दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़ पर से शव उतारा और उसे कंधे पर डालकर सदा की भाँति मौन श्मशान की ओर चल पड़े। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने कहा, "राजन, मुझे पूर्ण विश्वास है कि आपको इस अर्धरात्रि के समय इस कष्टपूर्ण कार्य में प्रवृत्त करने में अवश्य किसी का हाथ है। वह व्यक्ति अवश्य ही निम्नकोटि का होना चाहिए। इसमें ज़रा भी आश्चर्य की बात नहीं है कि अद्‌भुत शक्तियों के अधिकारी केवल महान लोग ही नहीं होते हैं, बल्कि अधम लोग भी कई बार उन पर अधिकार कर लेते हैं। आप कहीं ऐसे ही किसी व्यक्ति के प्रभाव में तो नहीं आगये ? मैं आपको ऐसी दो देवियों की कहानी सुनाता हूँ जो शक्ति-संपन्न तो थीं पर जिनमें से प्रियाम्बा अहंकार रखती थी। फिर भी जटिल समस्या के आने पर वह किस तरह अपने विवेक का परिचय देती है, यह मैं आपको सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए

बेताल कथा

सुनिये !"

बेताल कहानी सुनाने लगा :

शिलापुर राज्य की सीमा के निकटवर्ती वन में दो मंदिर थे। उनमें से एक मंदिर में प्रियाम्बा नाम की देवी की प्रतिष्ठा थी और दूसरे मंदिर में जगदाम्बा की।

प्रियाम्बा देवी में यह शक्ति थी कि वह प्रतिदिन अपने पास आनेवाले भक्तों में से केवल दो भक्तों की ही कामना को पूर्ण कर सकती थी, जबकि जगदाम्बा प्रतिदिन केवल एक भक्त की कामना को ही पूर्ण कर सकती थी। कामनाओं के अधिक फलीभूत होने के कारण ही प्रियाम्बा का मंदिर सदा भक्तों से भरा रहता था। पर जगदाम्बा के मंदिर में भक्तों की भीड़ बहुत अधिक नहीं होती थी। इस कारण प्रियाम्बा के अन्दर अहंकार घर कर गया था।

कभी रात्रि के समय यदि प्रियाम्बा की जगदाम्बा से भेंट हो जाती, तो वह बड़े गर्व के साथ कहती, "जगदा, देखो, मैं कितनी महिमाशालिनी हूँ ! तुम्हें देखकर तो मुझे बड़ी दया आती है। मेरा मंदिर भक्तों से शोभायमान रहता है। पर तुम्हारा मंदिर तो कई बार सुनसान रहता है। तुम्हें कितना दुख होता होगा ?"

प्रियाम्बा की बात के उत्तर में जगदाम्बा शांतिपूर्वक कहती, "प्रियाम्बा, इसमें दुखी होने की क्या बात है ? हम दोनों ही तो भक्तों का हित और कल्याण चाहती हैं।"

जगदाम्बा का यह उत्तर प्रियाम्बा को अत्यन्त निराशाजनक प्रतीत होता। उसके अहंकार की तृप्ति न होती। वह तो चाहती थी कि जगदाम्बा उसकी प्रशंसा करे और अपने भाग्य का रोना रोये। पर यहाँ तो बात ही उलटी थी।

एक दिन एक विशेष घटना घटी। शिलापुरी के राजा शरदचंद्र घोड़े पर सवार होकर अकेले ही प्रियाम्बा के मंदिर में आये। उन्होंने मंदिर के सामने अपना घोड़ा रोका और उतरकर मंदिर के अन्दर गये। राजा शरदचंद्र ने प्रियाम्बा की प्रतिमा के सामने प्रणाम करके कहा, "देवि, मैं तुम्हारी महिमा से भलीभांति परिचित हूँ। मेरी एक कामना है। मैं पड़ोसी राजा सत्यपाल पर शीघ्र ही आक्रमण करूँगा। उस युद्ध में धन-जन की चाहे कितनी भी बड़ी हानि क्यों न हो, मुझे विजयश्री चाहिए। माता, आप मुझे जीत का आशीर्वाद दो !"

इस घटना के कुछ देर बाद ब्रह्मरुद्र नाम का एक लुटेरा मंदिर में आया। उसने प्रियाम्बा देवी को भक्तिपूर्वक प्रणाम करके निवेदन किया, "हे महिमाशालिनी अम्बा, शिलापुरी के एक धनवान सेठ के घर में विवाह का उत्सव है। मैं वहाँ अपने अनुचरों के साथ जाऊँगा और वहाँ के सब लोगों को लूटूँगा। मुझे इस काम में सफलता मिले, यह वर देना!" इस प्रकार अपनी कामना प्रकट करके लुटेरा ब्रह्मरुद्र भी चला गया।

फिर कुछ देर बाद रक्तभैरव नाम का एक राक्षस मंदिर में आया। वह पास के घने बन में रहता था। उसने प्रियाम्बा देवी से निवेदन किया, "देवि अम्बा, चार दिन से नरमांस न पाने के कारण मैं भूख से तड़प रहा हूँ। इसलिए मुझ पर कुछ ऐसी कृपा करो कि मुझे चार मनुष्य तत्काल आहार के रूप में प्राप्त होजायें और इसके बाद भी प्रतिदिन मुझे नरमांस प्राप्त होता रहे।" इस प्रकार विनती करके वह राक्षस भी चला गया।

देवी प्रियाम्बा ने राजा, डाकू और राक्षस तीनों की प्रार्थनाएं क्रमशः सुनीं। देवी ने समझ लिया कि इन तीनों की कामनाएं ही अंधी और अन्यायपूर्ण हैं। देवी प्रियाम्बा ने निश्चय कर लिया कि इन तीनों की कामनाओं को पूर्ण नहीं किया जायेगा। देवी अपने मंदिर में पूरे दिन प्रतीक्षा करती रही कि कुछ और भक्त आयें और अपनी कामना का निवेदन करें। पर अत्यन्त आश्चर्य की बात यह हुई कि उस दिन उन तीनों के अलावा अन्य कोई भक्त नहीं आया। देवी प्रियाम्बा के सामने जटिल समस्या उत्पन्न होगयी।

देवी में विद्यमान शक्ति का यह नियम था कि

"कैसी जटिल समस्या ?" जगदाम्बा ने उससे पूछा ।

प्रियाम्बा ने अपने पास आये राजा, डाकू और राक्षस की कामनाएं सुनाकर कहा, "जगदा, इन तीनों की ही कामनाएं अन्य लोगों के लिए हानिकारक हैं । मैं इन्हें पूरा करना नहीं चाहती । तुम जानती ही हो, यदि मैं प्रतिदिन दो भक्तों की कामनाओं को पूर्ण न करूँ, तो मेरी शक्ति का लोप हो जायेगा । पर आज सबसे बड़े दुख और आश्चर्य की बात तो यह हुई कि मेरे पास आज इन तीनों के अलावा और कोई नहीं आया । अब स्थिति यह है कि या तो मैं उनकी कामनाओं को पूर्ण करूँ या अपनी शक्ति खो दूँ ! मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूँ ?"

प्रतिदिन दो भक्तों की कामनाओं की पूर्ति अवश्य करनी है । ऐसा न होने पर देवी की शक्ति का लोप हो जायेगा । राजा, डाकू और राक्षस की कामनाओं को पूर्ण करना अधर्म और अन्याय था। देवी नहीं चाहती थी कि उससे ऐसा अधम काम हो, पर वह अपनी शक्ति से भी वंचित नहीं होना चाहती थी ।

प्रियाम्बा समस्या को सुलझाने का जितना अधिक प्रयत्न करती, समस्या उतनी ही जटिल हो जाती । ऐसी स्थिति में उसे जगदाम्बा का स्मरण आया । उस रात वह जगदाम्बा से मिलकर बोली, "जगदा, मेरे सामने एक जटिल समस्या उत्पन्न होगयी है । इसे सुलझाने का कोई उपाय बताओ, इसीलिए मैं तुम्हारे पास आयी हूँ ।"

सारा वृत्तान्त सुनकर जगदाम्बा बोली, "प्रिया, तुम चिंता न करो ! जैसा मैं कहती हूँ वैसा करो ! तुम्हें उन तीनों की कामनाओं की पूर्ति करने की कोई आवश्ययकता नहीं है । फिर भी, तुम्हारी महिमाओं का, और तुम्हारी शक्ति का नाश नहीं होगा ।"

जगदाम्बा की बात सुनकर प्रियाम्बा विस्मित हो उठी । उसने पूछा, "जगदा, लेकिन यह कैसे संभव है ?"

"सुनो, प्रिया ! तुम उनकी कामनाओं की पूर्ति न करो ! प्रकट ही है कि इस प्रकार तुम्हारी शक्ति का लोप हो जायेगा । तदुपरान्त तुम मेरे पास आकर मुझसे कामना करना कि तुम्हारी शक्ति तुम्हें पुनः प्राप्त हो जाये ! तुम मेरी शक्ति के विषय में

जानती ही हो कि मैं प्रतिदिन एक व्यक्ति की कामना - पूर्ति कर सकती हूँ । मैं तुम्हारी खोयी हुई शक्ति को तुम्हें पुनः वापस दिला दूँगी ।'' जगदाम्बा ने समझाया ।

जगदाम्बा का उत्तर सुनकर प्रियाम्बा को एक नयी चिंता ने आ घेरा । उसने अनेक अवसरों पर जगदाम्बा के सामने अपने बड़प्पन की प्रशंसा की थी और उसे छोटा दिखाने का प्रयत्न किया था । इस समय यदि वह उन तीन में से दो व्यक्तियों की कामना की पूर्ति नहीं करती है तो वह शक्तिहीन हो जायेगी । ऐसी स्थिति में यह भी संभव है कि जगदाम्बा के हृदय में प्रतिशोध की भावना जग जाये और वह ईर्ष्यावश उसकी कामना की पूर्ति न करे । तब उसकी क्या दशा होगी ? जब भक्त उसे शक्ति और महिमा-विहीन समझेंगे तो वे उसके मंदिर में आना छोड़ देंगे और जगदाम्बा को ही अपनी इष्टदेवी मान लेंगे । तब उसे कितनी व्यथा होगी ? वह अपने पुराने वैभव को याद कर कितना तड़पेगी ?

प्रियाम्बा कुछ देर तक इसी प्रकार के सोच-विचार में डूबी रही । इसके बाद उसने अपने मन में कोई निर्णय किया और दृढ़तापूर्वक मन ही मन बोली, ''मेरी शक्ति रहे या जाये, किन्तु मेरे पास आये राजा, डाकू और राक्षस की कामनाएँ निष्फल हो जायें !''

दूसरे ही क्षण प्रियाम्बा के शरीर से शक्ति तिरोहित होगयी । उसका मुखमंडल तेज विहीन होगया, शरीर की शोभा मलिन होगयी ।

प्रियाम्बा ने समझ लिया कि अब वह पूरी तरह शक्तिविहीन है । उसने हाथ जोड़कर बड़े

विनम्र भाव से जगदाम्बा से कहा, "जगदाम्बा देवि, मुझे मेरी खोयी हुई शक्ति प्रदान करो !"

"तथास्तु!" जगदाम्बा ने आशीर्वाद दिया।

दूसरे ही क्षण प्रियाम्बा का मुख-मंडल दिव्य तेज से दमक उठा ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर, कहा, "राजन, प्रियाम्बा में जगदाम्बा से अधिक शक्ति अवश्य थी, पर जगदाम्बा के प्रति उसका व्यवहार अत्यन्त अहंकारपूर्ण एवं क्षुद्र था। जगदाम्बा ने पुनः उसे शक्तिसंपन्न बना दिया । ऐसा उसने किस प्रभाव के कारण किया, यदि इस संदेह का समाधान आप जानकर भी न करेंगे तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा ।"

तब विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "यह सत्य है कि प्रियाम्बा में पहले अहंकार था और वह जगदाम्बा के साथ क्षुद्र व्यवहार भी करती थी । पर जब उसने अनुभव किया कि तीन दुष्ट और स्वार्थी लोगों ने उसके सामने जो कामनाएं रखी हैं, वे दूसरों की विपदा और विनाश का कारण हैं, तो उसका हृदय परिवर्तित होगया । वह अहंकारिणी अवश्य थी, पर उसमें सद्-असद् का विवेक भी था । उन तीनों में से किन्हीं दो की कामनाओं की पूर्ति न करने पर उसकी शक्ति का नाश हो जायेगा, वह अच्छी तरह जानती थी । फिर भी वह इस बलिदान के लिए तत्पर होगयी । यह त्याग कोई निस्वार्थी एवं विशाल हृदय व्यक्ति ही कर सकता है । इस घटना से प्रियाम्बा के गुणों को प्रकाश मिल गया । उधर जगदाम्बा स्वाभाव से ही नम्र, मधुर और प्रेममयी थी । अपनी ही श्रेणी की एक देवी की सहायता करने में उसकी कोई हानि नहीं थी । जगदाम्बा का कार्य त्याग की भावना से प्रेरित नहीं, उसके हृदय की उदारता का परिचायक है । यहाँ परस्पर के प्रभाव का प्रश्न नहीं है, सद्भावना का प्रश्न है । प्रियाम्बा ने जो कुछ किया, वह निश्चय ही प्रशंसनीय है ।"

राजा विक्रमार्क के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पेड़ पर जा बैठा । (कल्पित)

नौरत्नहार

राजा वीरदेवसिंह मणिपुर के राजा थे । राजकुमारी चित्रलेखा के जन्मदिन के अवसर पर राजा ने अपनी बेटी को उपहार देने के लिए एक नौरत्न हार बनवाया । नगर के पारखी जौहरियों ने अनेक रत्नों में से कुछ रत्न चुनकर वह हार बनाया था । वह हार न केवल अत्यन्त मूल्यवान था, बल्कि देखने में भी उसकी शोभा निराली थी । एक रात राजकुमारी का वह हार चोरी चला गया ।

राजकुमारी राजभवन के अन्दर के कक्ष में शयन करती थी । बाहर का कोई व्यक्ति उस हार को चुराने का साहस नहीं कर सकता था । यदि राजमहल के सेवक-सेविकाओं से पूछताछ की जाये तो सच्चाई प्रकट नहीं होगी । और अगर एक-एक को बुलाकर उस पर सीधे यह आरोप लगा दिया जाये कि "तुमने ही चोरी की है" या "तुम ही चोर हो"— तो भी समस्या हल नहीं होगी ।

राजा वीरदेवसिंह ने अपने मंत्री प्रसेनजित पर इस समस्या को हल करने का भार सौंप दिया ।

मंत्री प्रसेनजित ने काफ़ी सोच-विचार कर कुछ फैसला कर लिया । उसने दोपहर के पहले अपने तीन विश्वासपात्र अनुचरों को बुलाया और उन्हें क्या करना है, यह अच्छी तरह समझा दिया ।

अपरान्ह का समय हुआ । प्रसेनजित ने राजमहल की एक विशेष कचहरी में सबको एकत्रित कर कहा, "आप सब लोग सुनें! पिछली रात आपमें से ही किसी ने राजकुमारी का नौरत्नहार चुराया है । जिसने यह चोरी की है, अगर वह तत्काल उस हार को लाकर सौंप दे, तो मैं उसे क्षमा कर दूँगा । वरना, उसे असहनीय यातनाएं देकर मार डाला जायेगा । मैं सबको चेतावनी दे रहा हूँ ।" मंत्री की बात का किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित एक कहानी

इसी समय उस स्थान पर एक मांत्रिक ने प्रवेश किया ।

"पधारिये, पधारिये! मांत्रिक महोदय, ऐसा लगता है कि आप ठीक समय पर आये हैं। हमें आपकी मंत्र शक्ति की निश्चय ही आवश्यकता पड़ सकती है।" यह कहकर मंत्री ने मतंग भैरव नाम के उस मांत्रिक का स्वागत किया ।

तभी एक व्यापारी दौड़ा हुआ आया और प्रसेनजित से बोला, "मंत्रिवर, मेरा नाम जीवन है। कल रात मेरे घर में चोरी होगयी है । चोर दस हज़ार रुपये चुरा ले गये हैं ।"

मंत्री प्रसेनजित ने मांत्रिक मतंग भैरव से कहा, "मांत्रिक महोदय, राजमहल के चोर के मामले को बाद में देखेंगे। पहले आप जीवन के घर में चोरी करनेवाले चोर का पता लगाइये !"

मांत्रिक मतंग भैरव ने कमण्डलु से थोड़ा-सा जल लिया और 'ऐं ह्रीं क्लीं' मंत्र पढ़कर उस जल को वहाँ एकत्रित लोगों पर छिड़क दिया। दूसरे ही क्षण वहाँ खड़ा एक आदमी चीत्कार करके नीचे गिर पड़ा और असहनीय पीड़ा से छटपटाने लगा। वह चिल्लाकर बोला, "मुझे मत मारो ! मैंने ही चोरी की है। मैं माल ला दूँगा।"

"मांत्रिक जी, आप इसे तड़पने दीजिए ! अब आप राजकुमारी का नौरत्नहार चुरानेवाले के लिए मंत्रशक्ति का प्रयोग कीजिए और उसे पकड़ने के लिए कमण्डलु का जल छिड़किये !" मंत्री ने कहा ।

तुरन्त मल्लिका नाम की एक दासी आगे आयी और मंत्री के पैरों पर गिरकर बोली, "महामंत्री जी, मुझे क्षमा कर दीजिए ! मैंने ही लोभ में पड़कर रत्नहार चुराया है। मेरा अपराध क्षमा हो ! मेरी रक्षा कीजिए !" यह कहकर वह रोने लगी ।

उसी समय ज़मीन पर छटपटा रहा वह आदमी मुस्करा कर उठ बैठा । मांत्रिक और व्यापारी भी अपने सच्चे रूप में आगये ।

वे तीनों व्यक्ति मंत्री प्रसेनजित के नियुक्त किये हुए वे ही अनुचर थे। उन लोगों के इस नाटक से राजकुमारी चित्रलेखा का खोया हुआ बहुमूल्य हार वापस मिल गया ।

हमारे देश के आश्चर्य

लाल क़िला
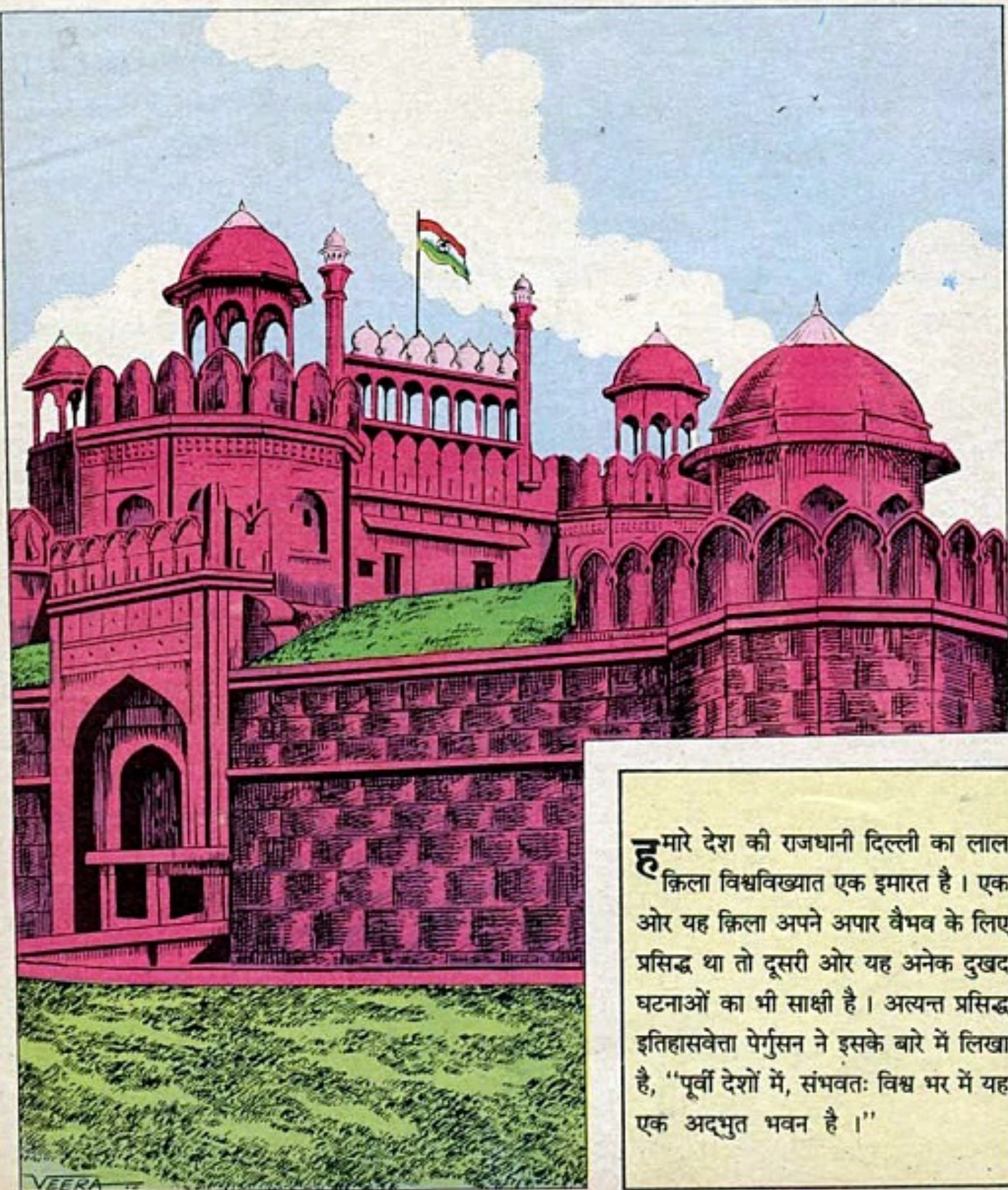
हमारे देश की राजधानी दिल्ली का लाल क़िला विश्वविख्यात एक इमारत है। एक ओर यह क़िला अपने अपार वैभव के लिए प्रसिद्ध था तो दूसरी ओर यह अनेक दुखद घटनाओं का भी साक्षी है। अत्यन्त प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता पेर्गुसन ने इसके बारे में लिखा है, "पूर्वी देशों में, संभवतः विश्व भर में यह एक अद्भुत भवन है।"

बादशाह शाहजहाँ ने अनेक अद्भुत इमारतों का निर्माणा करवाया था। उसी ने लाल क़िले का भी निर्माण कराया। शाहजहाँ अपनी राजधानी आगरा से दिल्ली ले आया और १६३८ में इस क़िले का निर्माण प्रारंभ करके दस वर्षों में इसे पूरा करवा दिया।

भूकम्प एवं आततायियों के आक्रमण के कारण लाल क़िले के अनेक भवन ध्वस्त होगये। फिर भी अनेक भवन आज भी ज्यों के त्यों सुरक्षित हैं। चांदनी चौक के सामनेवाला लाहौर गेट अपनी निर्माण कला के कारण अत्यन्त प्रमुख है।
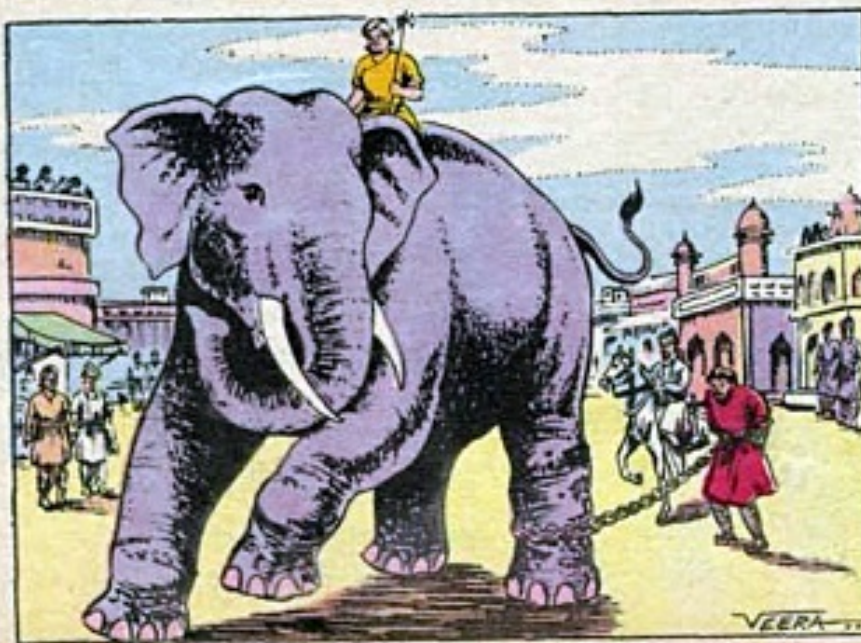
यह लाल क़िला एक ज़माने में अपने मयूर सिंहासन और अमूल्य रत्नों के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध था। धीरे-धीरे विदेशियों की लूटपाट और आपसी वैर के कारण लाल क़िले का वैभव चुकता चला गया। शाहजहाँ जब क़ैद और रुग्ण था, तब उसके लालची और क्रूर पुत्र औरंगजेब ने गद्दी के वारिस दारा को बन्दी बनाकर उसे सड़कों पर घिसटवाया और उसका अंत किया।

औरंगज़ेब के साथ मुग़ल साम्राज्य का पतन प्रारंभ हुआ। मौक़ा देखकर फ़ारस के बादशाह नादिरशाह ने सन् १७३८ में दिल्ली पर आक्रमण किया और लाल क़िले में घुसकर मुहम्मद शाह के महल पर कब्ज़ा कर लिया। नादिरशाह के साथ सौ हाथियों का जुलूस निकला।
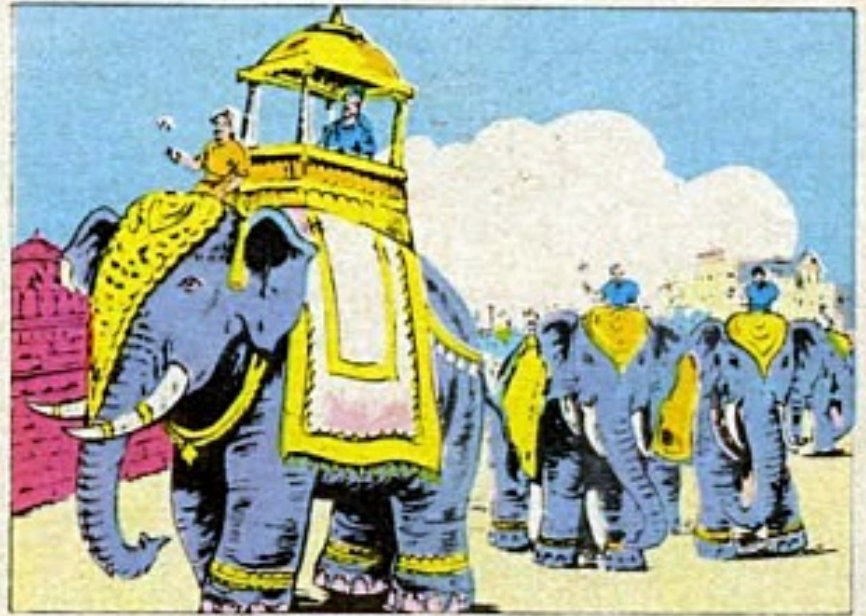
उसी शाम नादिरशाह के कुछ सैनिकों ने नगर की दूकानों में लूटपाट आरंभ कर दी। कुछ व्यापारियों ने नादिरशाह के सैनिकों का वध कर डाला। यह ख़बर मिलते ही नादिरशाह ने दिल्ली में क़त्ले आम का हुक्म दे दिया। बालक, वृद्ध और स्त्रियों का विचार किये बिना नादिरशाह के सैनिकों ने बीस हज़ार नागरिकों को मौत के घाट उतार दिया।

इसके बाद नादिरशाह अपार संपदा लेकर अपने देश फ़ारस लौट गया। इसके बाद भी लाल क़िला और कई हमलों का शिकार बना। १७८८ में रोहिल्लों ने दिल्ली पर अधिकार कर लिया। लाल क़िले में पर्याप्त संपत्ति न पाकर गुलाम खुदीर ने क्रोध में आकर बादशाह शाह आलम की आँखों में तलवार घुसेड़ दी।

१८५७ में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध सैनिक-विद्रोह हुआ । विद्रोही सिपाहियों ने लाल क़िले के सामने सभा करके बादशाह बहादुरशाह ज़फर के समर्थन की मांग की । वृद्ध बादशाह ने उन्हें अपना समर्थन दिया । पर विद्रोह असफल रहा । शाह ज़फर दोषी क़रार कर दिये गये और उन्हें लाल क़िले से निकालकर बर्मा भेज दिया गया ।

१९४५ में लाल क़िले के अन्दर ही नेताजी सुभाष चंद्र बोस की आज़ाद हिन्द फौज पर मुक़दमा चला । सुनवाई में अभियोगियों की ओर से नेहरू, सरदार पटेल, आसफ़ अली, तेज बहादुर सप्रू, भूलाभाई देसाई आदि प्रमुख नेता उपस्थित थे । तीन प्रमुख सेनापति दोषी ठहराये गये । किन्तु सज़ा अमल न हुई ।

१९४७ में जब भारत आज़ाद हुआ, तब हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पं॰ जवाहरलाल नेहरू ने लाल क़िले पर राष्ट्रीय ध्वज फ़हराया । इतिहास प्रसिद्ध इस लाल क़िले के साथ हमारी आज़ादी की लड़ाई की कहानी भी जुड़ी हुई है, इससे इसका महत्व और अधिक बढ़ गया है ।

धोखे का सपना

पाँच सौ वर्ष पहले हंगरी में मैथ्यूस नाम का एक राजा राज्य करता था। वह अत्यन्त धर्मात्मा और न्यायप्रिय था। राजधानी से कुछ दूर पर छोटे-छोटे नगर और गाँव बसे हुए थे। उन्हीं में से एक गाँव में मार्कनी नाम का एक धनवान सेठ भी रहता था। धोखा-दग़ा देने में उस सेठ की कोई तुलना नहीं थी। दूसरों को मुसीबत में डालकर उन्हें दुखी देखने में उसे बहुत आनन्द आता था। वह बेहिसाब झूठ बोलता और जब दूसरा आदमी किसी संकट में फँस जाता तो उसे तरह-तरह से विश्वास दिलाकर अपने पक्ष में कर लेता। दूसरों को झांसा देकर अपने मन की करवाना उसका ख़ास धंधा था।

एक बार मार्कनी राजधानी में गया। वहाँ उसने कोई सौदा किया और थैली भर कर सुवर्ण मुद्राएं लेकर वापस अपने गाँव में आगया। उसने गाँव के लोगों से कहना आरंभ किया कि उसने कुत्ते बेचकर इतना सारा सोना कमाया है और राजधानी में कुत्तों की बड़ी मांग है। यह बात उसने अनेक तरह से लोगों को समझायी और उन्हें अपनी बात का पूरा विश्वास दिला दिया।

मार्कनी की बातें सुनकर उसी गाँव के एक ग़रीब आदमी ल्यूक के मन में लालच पैदा हुआ। वह मार्कनी के पास गया और विनम्र शब्दों में बोला, "सेठजी, कुत्तों के व्यापार के बारे में मैंने जो बातें सुनी हैं, क्या वे सच हैं?"

मार्कनी बोला, "सच है! महाराज मैथ्यूस अंधाधुंध कुत्ते ख़रीद रहे हैं और उनका अच्छा दाम दे रहे हैं। यह बात मालूम होते ही मैंने अपना काफ़ी धन लगाया और कुत्ते ख़रीदकर उन्हें राजधानी में राजा को अच्छे मूल्य पर बेच दिया। इसी एक सौदे में मैंने थैली भर सोने की मुद्राएं कमालीं। मुझे तो तुम्हारी ग़रीबी पर दया आती है। धन कमाना चाहते हो तो राजा के हाथ

हंगरी की लोक-कथा

कुत्ते बेचने का व्यापार करो ! वे और भी अनेक कुत्ते ख़रीदना चाहते हैं ।" इस प्रकार उस धोखेबाज़ मार्कनी ने गढ़कर पूरी दास्तान सुना दी।

ग़रीब ल्यूक ने अमीर मार्कनी की बात का पूरा विश्वास कर लिया । उस ग़रीब के मन में धन कमाने का उत्साह उमड़ पड़ा । पर उसके पास पूंजी के नाम पर केवल एक मरियल सी गाय थी और कुछ नहीं था। अगर उसे थोड़े से धन की भी ज़रूरत हो तो उसे उस गाय को बेचना पड़ता। ल्यूक इस अवसर को खोना नहीं चाहता था। वह उस मरियल गाय को हाट में ले गया और उसे बेच डाला । उस धन से उसने कुछ कुत्ते ख़रीद लिये और उनके गले में रस्सियां बांधकर उन्हें राजधानी में लेगया ।

जब ल्यूक राजमहल के द्वार पर पहुँचा, तब द्वारपालों ने उसे वहीं रोक दिया और कितनी ही मिन्नतें करने के बाद भी अन्दर नहीं जाने दिया । ल्यूक समझ गया कि मार्कनी सेठ ने उसके साथ धोखा किया है । वह सीधा-सादा आदमी था, सेठ के दग़ा को समझ नहीं सका और अब अपनी गाय भी खो बैठा । उसे देखकर राजसेवक ठहाका मार कर हँसने लगे । ल्यूक रुआंसा होगया । उसकी आंखों में आँसू भर आये ।

राजमहल की छत पर से राजा ने देखा कि कुत्तों के साथ खड़ा एक ग़रीब आदमी रो रहा है। राजा मैथ्यूस ने तुरन्त सारी बात का पता लगाया और एक सेवक को आदेश दिया कि उस गरीब आदमी को तुरन्त राजा के सामने उपस्थित किया जाये ।

ग़रीब ल्यूक ने राजा के पास जाकर सारा वृत्तान्त सुनाया कि उसके गाँव के धनवान सेठ मार्कनी ने उसके साथ कैसा धोखा किया है !

राजा मैथ्यूस धर्मात्मा भी थे और दयालु भी। उन्हें ल्यूक पर बड़ी दया आयी। उन्होंने कहा, "मैं सचमुच ही कुत्ते ख़रीदता हूँ, यह बात झूठ नहीं है, लो यह धन लो !" और उसे एक सौ स्वर्ण मुद्राएं दिलवा दीं । उन्होंने कुत्ते रख लिये और धनवान मार्कनी का पता-ठिकाना ले लिया ।

ग़रीब ल्यूक की खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा । उसने गाँव लौटकर सबको यह किस्सा सुनाया कि मार्कनी की सलाह से राजा को कुत्ते बेचकर उसने कितनी आसानी से सौ स्वर्ण मुद्राएं

कमाली हैं ।

मार्कनी के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसे क्या मालूम था कि उसकी मज़ाक एक ग़रीब आदमी को सौ स्वर्ण मुद्राओं का मालिक बना देगी। उसका झूठ सच और उसका धोखा दूसरे के लाभ का कारण बन गया। उसके दिमाग में विचारों की चक्की चलने लगी ।

धनवान मार्कनी से रहा नहीं गया और वह अपने धन को बढ़ाने का यह सरल उपाय कार्यान्बित करने का विचार करने लगा। विलम्ब से नुक़सान हो सकता था। उसने तत्काल अपनी सारी ज़ायदाद बेच डाली और जितना भी धन था, उससे हज़ारों कुत्ते ख़रीद लिये । वह उन्हें राजधानी में हांक ले गया और राजमहल के सामने पहुँचा। मार्कनी का द्वारपालों से झगड़ा होगया । उन्होंने मार्कनी और उसके कुत्तों को राजमहल के अन्दर नहीं जाने दिया। मार्कनी बड़े ज़ोर से चिल्ला उठा। द्वारपालों ने भी उसे ज़ोर से धमकाया। कुत्ते भी क्यों चुप रहते? वे भी भूंकने लगे ।

शोरगुल होने के कारण राजा मैथ्यूस ने राजमहल की छत पर से नीचे देखा। राजा ने धनवान मार्कनी और उसके कुत्तों को अन्दर लाने का आदेश दिया ।

मार्कनी ने राजा को बताया कि वह कुत्तों का सौदा करने आया है ।

राजा मैथ्यूस समझ ही गये थे कि यह वही सेठ मार्कनी है, जिसने ग़रीब ल्यूक को धोखा दिया था। राजा मैथ्यूस बोले, "सेठ मार्कनी, मैं अपनी आवश्यकता के अनुसार कुत्ते ख़रीद चुका हूँ। अब मुझे कुत्तों की ज़रूरत नहीं है। मुझे बड़ा दुख है, पर तुम देर से आये ।"

सेठ मार्कनी तो आसमान से गिर पड़ा। वह निराश होकर मुँह लटकाये अपने गाँव पहुँचा। वह अपनी सारी जायदाद तो खो ही चुका था, हाथ में पैसा भी नहीं था। उसके कुत्तों के सौदे की बात पर गाँव के लोग उसका मज़ाक उड़ाया करते। अब मार्कनी ने भी अपना पुराना धोखाधड़ी का स्वभाव बदल दिया था। धोखे की सज़ा ने उसे बहुत कुछ सिखा दिया था ।
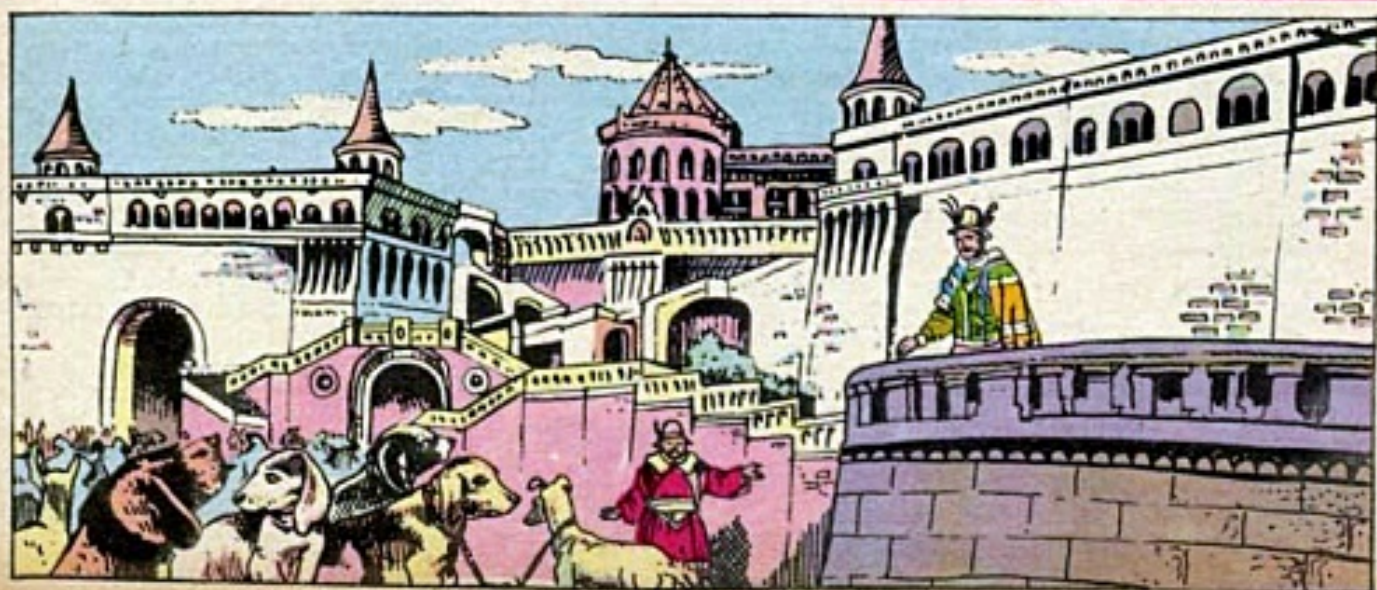
मानवता

एक बार कन्नड देश में क्षय रोग का आक्रमण हुआ। रोगियों की संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। वहाँ नगरों में नियुक्त राज-अधिकारियों ने राजा वेंकप्पन से निवेदन किया। पत्र भी लिखे और स्वयं उपस्थित होकर भी सारी जानकारी दी। राजा वेंकप्पन ने उन अधिकारियों की बात को विशेष महत्व नहीं दिया।

अन्त में वही बीमारी राजधानी में भी फैलने लगी। कई नागरिक क्षय रोग के शिकार होगये। अब राजा वेंकप्पन की आँखें खुलीं और उन्होंने नगर में एक विशाल क्षय रोग अस्पताल बनवाया। उसमें अच्छे-अचछे चिकित्सकों की नियुक्ति की गयी। राजा इस चिकित्सालय का उद्घाटन अपने राज कुलगुरु आत्मानन्द के कर-कमलों से करवाना चाह रहे थे। पर उन दिनों महात्मा आत्मानन्द किसी बन में एकान्तवास कर रहे थे।

राजा वेंकप्पन बन में पहुँचे और महात्मा आत्मानन्द से निवेदन किया, "गुरुदेव, मेरी प्रबल इच्छा है कि क्षय चिकित्सालय का उद्घाटन आपके कर-कमलों द्वारा हो !"

इसके उत्तर में कुलगुरु आत्मानन्द ने कहा, "राजन, मैं क्षय-चिकित्सालय के उद्घाटन के लिए नहीं, उसे बन्द करने के दिन आना चाहता हूँ।" यह कहकर महात्मा आँख बन्द कर ध्यान में डूब गये।

राजा वेंकप्पन समझ गये कि महात्मा आत्मानन्द उस दिन राजधानी में कदम रखना चाहते हैं, जिस दिन क्षयरोग पूरी तरह नष्ट हो जायेगा और चिकित्सालय की आवश्यकता नहीं रहेगी। राजा ने महात्मा के मानवता के संदेश को हृदय में रखकर रोग के निर्मूलन में अपनी पूरी शक्ति लगा दी और अन्त में सफलता प्राप्त की।

उत्तर रामायण

महर्षि अगत्स्य ने श्रीरामचंद्र के प्रश्न करने पर उन्हें बाली एवं सुग्रीव की कहानी सुनायीः

मेरु पर्वत का मध्य शिखर अत्यन्त पवित्र माना जाता है। न केवल पृथ्वी पर, बल्कि स्वर्ग के देवता भी उसे अत्यन्त पवित्र मानते हैं। उस शिखर पर विशाल ब्रह्म सभा है।

एक बार ब्रह्मा योगाभ्यास में रत थे। उस समय उनकी आँख में जो जल भर आया, उसके झरे हुए कणों में से एक वानर का जन्म हुआ। ब्रह्मा ने उस वानर को कुछ समय तक अपने पास रहने तथा मेरुपर्वत पर प्राप्त कन्दमूल-फलों पर निर्भर रहने का आदेश दिया। वानर मेरु शिखर पर रहने लगा। उसे भी प्रजापति ब्रह्मा अपने पिता समान लगते। वह उनकी आज्ञा मानता और विनम्र बना रहता। फिर भी, था तो वह वानर ही। वह दिन भर वृक्षों पर कूदता-फिरता और शाम होते ही सुन्दर फूल और फल लेकर ब्रह्मा के पास पहुँच जाता।

इसी प्रकार बहुत काल बीत गया। एक दिन उस वानर को बहुत प्यास लगी। जल के लिए वह मेरु पर्वत के उत्तरी शिखर पर पहुँचा। वहाँ उसे अनेक पक्षियों से भरा एक सरोवर दिखाई दिया। वानर ने अपने बदन को झटकारा और सरोवर के पास बैठकर प्यास बुझाने के लिए पानी के अन्दर अपना मुँह डालना चाहा। तभी उसे जल के अन्दर अपना प्रतिबिम्ब दिखाई दिया। उसने सोचा कि जल के भीतर एक और वानर है जो उसका प्रतिद्वन्दी है। वह उसका सामना करने के लिए तुरन्त सरोवर में कूद पडा और उसे खोजने के लिए उसने सारा सरोवर छान डाला।

८. सीता का परित्याग

जब जल के भीतर का वानर नहीं मिला, तो वह फिर किनारे पर आगया ।

सरोवर के किनारे पर आते ही एक विचित्र घटना हुई । मानवों से भिन्न प्राणियों के जीवन में ऐसी विचित्र घटनाएं प्रायः हुआ करती हैं । फिर वह वानर तो ब्रह्मा के नेत्रजल से जन्मा था । जल से बाहर आते ही वह वानर एक सुन्दर नारी के रूप में परिवर्तित होगया । वह नारी क्या थी, इश्वर का चमत्कार थी । उसका मुख मंडल चंद्र के समान श्वेत और सुन्दर था । आँखें खिले हुए कमल जैसी । बिंबाफल की तरह अधर थे और मोतियों की तरह दांत थे ।

विश्वमोहिनी रूप लिये वह नारी अभी वहीं बैठी हुई थी कि इंद्र और सूर्य उधर आ निकले । वे ब्रह्मा का दर्शन करके लौट रहे थे ।

इंद्र और सूर्य की दृष्टि एक साथ उस अपूर्व सुन्दर नारी पर पड़ी । उन्होंने ऐसा सौन्दर्य देवलोक में भी नहीं देखा था । उनका चित्त स्थिर न रहा और वे दोनों ही उस पर मोहित होगये तथा उससे प्रणय की प्रार्थना की । उस नारी ने दोनों का प्रेम स्वीकार कर लिया और इंद्र के द्वारा बाली को और सूर्य के द्वारा सुग्रीव को जन्म दिया । इंद्र ने अपने पुत्र बाली को स्वर्ण-कमलों की माला भेंट की तथा सूर्य ने अपने पुत्र सुग्रीव के लिए हनुमान की मैत्री का निरूपण किया ।

इसके बाद नारी बना वह वानर अपने पूर्व रूप को प्राप्त होगया । उसने अपने दोनों पुत्रों का पालन-पोषण किया । वही वानर ऋक्षराज है ।

इसके बाद ब्रह्मा के आदेश से अपने दोनों पुत्रों को साथ लेकर ऋक्षराज किष्किन्धा पहुँचा । वह वानरों की इस नगरी का राजा बना और उसने सप्त द्वीपों में फैले वानरों को अपनी प्रजा बनाया ।

"हे राम, इस प्रकार ऋक्षराज बाली और सुग्रीव की माता भी हैं और पिता भी ।" अगत्स्य ने कहानी समाप्त की ।

श्रीरामचंद्र के राज्याभिषेक के बाद काफ़ी दिनों तक अतिथियों का सत्कार होता रहा । इसके बाद सब एक-एक करके अपने नगरों को लौटने लगे । श्रीराम ने सबके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और सबको यथोचित सत्कार के साथ विदा किया ।

भरत के निमंत्रण पर आये काशी नरेश

प्रतर्द्धन तथा अन्य राजा भी अपने-अपने देशों को लौट गये । महाराजा जनक और महाराजा कैकेय भी पधारे । भरत एवं लक्ष्मण उन्हें पहुँचाने गये ।

राम के साथ आये हुए वानर एवं राक्षसों ने दो माह तक अयोध्या में सुखपूर्वक निवास किया । श्रीराम के सभासद्, अयोध्या के विशेष नागरिक सारे दिन अभ्यागतों के स्वागत-सत्कार में लगे रहते । हृदय में कृतार्थता का अनुभव करते एक दिन वे लोग भी चले गये । सुग्रीव, अंगद, हनुमान का श्रीराम ने भव्य सत्कार किया । इसी प्रकार विभीषण तथा अन्य राक्षसों का भी सम्मान किया । वे सब किष्किन्धा एवं लंका को लौट गये

अब राजा रामचंद्र महारानी सीता के साथ वन-विहार करते, मित्रों के साथ गोष्ठियों में भाग लेते एवं राजकार्य देखते । क्रमशः महारानी सीता में गर्भ के लक्षण प्रकट हुए। तब एक दिन श्रीराम ने सीता से कहा, "सीता, तुम्हारे हृदय में यदि कोई कामना, कोई अभिलाषा हो तो कहो, मैं अवश्य उसे पूरा करूँगा ।"

सीता ने नम्र भाव से सिर झुका लिया और मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा, "प्रभु, मेरी प्रबल इच्छा है कि मैं गंगा-तट पर बने ऋषियों के आश्रमों को फिर से देखूँ, वहाँ कन्दमूल-फल खाऊँ और वृक्षों के नीचे विहार करूँ ।"

"यह तो बड़ा शुभ विचार है । मैं कल ही तुम्हारे वन-विहार की व्यवस्था करता हूँ ।" श्रीरामचंद्र ने आश्वासन दिया ।

इसके बाद राम अपने मित्रों से मिलने गये । बड़ी देर तक आमोद-प्रमोद और मनोरंजन में समय बिताने के बाद श्रीराम ने भद्र नाम के एक गुप्तचर से पूछा, "भद्र, मुझे बताओ, मेरे और सीता के विषय में, मेरी माताओं तथा मेरे भाइयों के विषय में प्रजा का क्या विचार है?"

भद्र ने हाथ जोड़कर कहा, "महाराज, प्रजा तो अनेक प्रकार से सोच-विचार करती है, पर अधिकांश लोग रावण-संहार के बारे में ही मुख्य चर्चा करते हैं ।"

श्रीराम के मन में संशय हुआ कि भद्र अवश्य ही कोई विशेष बात छिपा रहा है । उन्होंने भद्र से कहा, "भद्र, तुम राज्य के विशेष गुप्तचर हो । तुम्हारा कर्त्तव्य है कि राजा को हर बात से अवगत कराया जाये, भले ही वह बात अच्छी हो या बुरी ! मुझसे सब सच-सच कहो ! तुम कुछ भी न छिपाकर अपना कर्त्तव्य निभाओ, इससे मैं भी अपने कर्त्तव्य में सावधान रह सकूँगा ।"

सबने अपने मस्तक झुका लिये और भद्र की बात को सच बताया ।

श्रीरामचंद्र ने सारे मित्रों को विदा किया और द्वारपाल को आदेश दिया, "शीघ्र जाकर भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न को यहाँ ले आओ !"

आज्ञा पाकर शीघ्र ही तीनों भाई रामचंद्र के समक्ष उपस्थित हुए। राम का मुख मंडल निस्तेज था और नेत्र अश्रुपूरित थे। श्रीराम ने भरे हृदय से अपने भाइयों का आलिंगन किया और उन्हें आसनों पर बैठने के लिए कहा । इसके बाद सीता के विषय में जो जनश्रुति, जो अपवाद उन्होंने सुना था, वह अपने भाइयों को कह सुनाया । इसके पश्चात् राम ने कहा, "सीता की अग्नि-परीक्षा हो चुकी है, वह निष्पाप है । मेरी अन्तरात्मा भी यही साक्षी देती है। लक्ष्मण, अग्नि तथा अन्य देवताओं ने सीता की पवित्रता की जो साक्षी दी थी, वह तुम्हारे समक्ष ही की तो घटना है । इसके बाद ही सीता को स्वीकार कर मैं अयोध्या में लाया और उन्हें योग्य राजमहिषी पद मिला । फिर भी, मैं यह आक्षेप सहन नहीं कर सकता। मैं अपने प्राण त्याग सकता हूँ, तुम्हें भी त्याग सकता हूँ, पर अपयश का भागी बनकर नहीं जी सकता। इस कलंक की तुलना में सीता का परित्याग अधिक सहने योग्य है । इस लोकापवाद से बढ़कर मेरे लिए कोई बड़ा दुख नहीं हो सकता। इसलिए, हे लक्ष्मण, तुम कल प्रातःकाल सीता को रथ में ले जाकर तमसा नदी के तट पर वाल्मीकि मुनि के आश्रम के निकट

"महाराज, आपने समुद्र पर सेतु बांधा, रावण जैसे प्रचण्ड प्रतापी राक्षस का संहार किया— सारी प्रजा आपका यशगान करती है और आप पर गर्व करती है । किन्तु सबके मन में एक ही आक्षेप है कि रावण सीता को अपनी गोद में उठाकर लंका ले गया और उन्हें बहुत समय तक अपने अधीन रखा, तब भी आपने सीता को स्वीकार कर लिया और उन्हें राजमहिषी पद दिया, इसलिए आपमें सद्-असद् का विवेक नहीं है।" भद्र ने अत्यन्त संकोच के साथ सब सच-सच कह दिया ।

भद्र के मुख से इतने बड़े आक्षेप को सुनकर रामचंद्र व्याकुल हो उठे । उन्होंने वहाँ उपस्थित अपने अन्य मित्रों से पूछा, "मित्रो, भद्र ने जो कुछ कहा, क्या वह सत्य है ?"

छोड़ आओ ! मेरी इस आज्ञा का प्रतिवाद न करो ! सीता के विषय में कुछ न कहो, तुम्हें मेरी सौगन्ध है। सीता ने ऋषियों के आश्रम देखने की इच्छा प्रकट की है। इस इच्छा को इसी रूप में पूर्ण होना था। यही होनहार है।" रामचंद्र ने अवरुद्ध कंठ से कहा।

अपनी बात समाप्त कर श्रीराम ने गहरी साँस ली और अत्यन्त व्यथित होकर राजभवन के भीतर चले गये।

यह बड़े भाई राम की नहीं महाराजा राम की आज्ञा थी। भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न तीनों अनुज ही तो उनके अनुवर्ती थे। उनके भक्त थे। राम उन्हें प्राणों से भी प्रिय थे, उनकी आज्ञा भी।

दूसरे दिन प्रातःकाल लक्ष्मण ने सुमंत्र को रथ प्रस्तुत करने के लिए कहा। लक्ष्मण की दशा हृदय विदारक थी। कंठ सूख रहा था। भारी हृदय से उन्होंने सुमंत्र से कहा, "सुमंत्र, महाराजा रामचंद्र का आदेश है कि सीता को मुनियों के आश्रमों में ले जायें। मैं और सीता माता चलने के लिए प्रस्तुत हैं। आप तुरन्त रथ तैयार करें। रथ पर मुलायम बिछावन हो, जिससे सीता माता को कष्ट न हो।"

सुमंत्र ने रथ प्रस्तुत किया। अब लक्ष्मण सीता के पास जाकर बोले, "भाभी, आपने राजा राम के सम्मुख आश्रम देखने की इच्छा प्रकट की थी। उन्होंने मुझे आपको वन में ले जाने का आदेश दिया है। आइये, रथ प्रस्तुत है।" हम शीघ्र चलते हैं।

लक्ष्मण की बात सुनकर सीता परमानन्दित हुईं। उन्होंने मुनि-पत्नियों एवं कन्याओं के योग्य, वस्त्र-आभूषण एवं अन्य उपहार सामग्री ली, तथा लक्ष्मण के साथ रथ में बैठकर वन-भ्रमण के लिए निकल पड़ीं। रथ तीव्र गति से बढ़ने लगा। सीता को अनेक अपशकुन दिखाई देने लगे। सीता ने शंकित होकर लक्ष्मण से कहा, "भैया लक्ष्मण, हमारी सास-माताएं कुशल से तो हैं न? मैंने आते समय उनके दर्शन नहीं किये!"

लक्ष्मण का हृदय व्याकुल था, फिर भी प्रकट रूप में शांत-संयत रहकर उन्होंने कहा, "भाभी, वे सब कुशल हैं।"

रात के निकट आने तक रथ गोमती तीर्थ पहुँच गया। रात वहीं बिताकर सुबह के समय वे

फिर यात्रा करने लगे और दोपहर तक गंगा-तट पर पहुँच गये। गंगा को देखते ही लक्ष्मण का दुख उमड़ पड़ा। उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। यह देख सीता शंकित हो उठीं, उन्होंने पूछा, "लक्ष्मण, क्या बात है? तुम रो क्यों रहे हो? मैं तो यह सोचकर प्रसन्न हो रही हूँ कि अनेक दिनों की मेरी इच्छा पूरी हो रही है। ऐसी स्थिति में तुम्हारा रुदन मेरे आनन्द में बाधा पहुँचा रहा है। चलो, हम शीघ्र ही नौका से गंगा पार करते हैं। मैं मुनियों के आश्रमों को देखना चाहती हूँ। देखो, मैं मुनि-पत्नियों और उनकी कन्याओं के लिए कितने उपहार लायी हूँ। वहाँ हम आज की रात बिताकर कल पुनः अयोध्या के लिए प्रस्थान करेंगे। मैं लौटकर शीघ्र ही श्रीराम के दर्शन करना चाहती हूँ।"

लक्ष्मण ने आँखें पोंछ लीं। फिर निकटवर्ती नाविकों से नौका लाने के लिए कहा। सुमंत्र गंगा के इस तट पर ही रह गये। सीता और लक्ष्मण नाव से उस पार पहुँचे।

अब वह क्षण सामने थे जब लक्ष्मण को अपने कठोर कर्त्तव्य का पालन करना था। लक्ष्मण ने बन में सीता की तपस्या देखी थी। राम के प्रति उनका अद्भुत प्रेम देखा था। उनकी पवित्रता देखी थी। अब उन्हीं सीता को राम का कठोर संदेश देना था। लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर सीता को प्रणाम किया, फिर भारी हृदय से कहा, "माता, मेरे भाई ने मेरे हृदय में शूल गाड़ दिया है। ऐसा पापपूर्ण कार्य करने के पहले यदि मैं मर जाता तो बहुत ही अच्छा होता!" यह कहकर लक्ष्मण दुख के आवेश में वहीं लुढ़क पड़े।

लक्ष्मण की यह दशा देख सीता घबरा उठीं, बोलीं, "लक्ष्मण, तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि तुम आवेशग्रस्त हो गये हो। तुम्हें तुम्हारे भाई की सौगन्ध है, तुम मुझसे सब स्पष्ट कहो! तुम्हारी इस व्यथा का क्या कारण है?"

तब लक्ष्मण ने रुद्ध कंठ से सीता से कहा, "माता, जब महाराज अपने मित्रों के साथ वार्तालाप कर रहे थे, तब आपके विषय में लोकापवाद उन्होंने सुना। वह अपवाद आपके सुनने योग्य नहीं है। पर उस अपवाद से व्यथित होकर मेरे भाई राजा राम ने आपका त्याग कर

दिया है। श्रीराम अच्छी तरह जानते हैं कि आप निर्दोष हैं। मैं भी इसका साक्षी हूं। फिर भी अपयश और कलंक को न सह पाने के कारण श्रीराम ने आपके त्याग का निर्णय लिया है। प्रजा की प्रसन्नता राम के लिए सर्वोपरि है। आपको यहीं छोड़कर मुझे तुरन्त अयोध्या लौट जाना है। यही राजा का आदेश है। आप अपने मन को किसी प्रकार शांत कर पुण्यप्रद मुनियों के आश्रम में निवास कीजिए। महामुनि वाल्मीकि स्वर्गवासी महाराज दशरथ के अनन्य मित्र हैं। वे अवश्य आपको शरण देंगे।"

लक्ष्मण के मुख से अपने त्याग की बात सुनकर सीता का मस्तक चकराने लगा। उन्हें लगा आकाश टुकड़े-टुकड़े होगया है, पृथ्वी विदीर्ण होगयी है, नदियां सूख गयी हैं, पक्षी गूंगे हो गये हैं, हवाएं रुक गयी हैं और उनका हृदय एक विशाल मरुस्थल बन गया है। कुछ क्षण वे चुप रहीं, फिर संभलकर दीनतापूर्वक रोती हुई बोलीं, "लक्ष्मण, मैंने यातनाएँ झेलने के लिए ही जन्म लिया है। अवश्य ही पिछले जन्म में मैंने कोई पाप किया था। अवश्य ही मैं किसी युगल दम्पती के विरह का कारण बनी थी कि मुझे यह विरह-व्यथा सहने को मिली। वनवास में राम मेरे साथ थे, इसलिए मैं प्रसन्न थी, पर यह वनवास कैसे कटेगा? राम के बिना यह जगत शून्य है। लक्ष्मण, मैं अपनी व्यथा किसे सुनाऊँ? यदि मुनिगण मुझसे पूछेंगे कि मेरे पति ने मुझे क्यों त्याग दिया, तो इस प्रश्न का मैं क्या उत्तर दूँगी? मैं गंगा में कूदकर अपने प्राण त्याग सकती थी, पर इससे रघुकुल की संतति का नाश होगा। तुमने अपने भाई की आज्ञा का पालन किया, अब तुम जा सकते हो। सभी सासों से मेरा प्रणाम कहना। राजा से कहना, मैंने उनका कुशल-मंगल पूछा है और उन्हें साष्टांग प्रणाम कहा है। वे यशस्वी हों! उनके कलंक को मिटाना मेरा कर्त्तव्य है। उनसे मेरी यह अंतिम कामना निवेदन करना कि वे न्याय एवं धर्म का आश्रय लेकर राज्य-शासन करें और अपने कुलजनों एवं प्रजा को समान दृष्टि से देखें और विश्व को धवल करनेवाला देव-दुर्लभ यश प्राप्त करें!"

मत्स्यकन्या

धवलगिरि के राजा वीरवर्मा एक शाम उद्यान में विहार कर रहे थे, तब एक सेवक ने वहाँ पहुँचकर सूचना दी, "महाराज, एक मछुआरा आपके दर्शन करना चाहता है ।"

"मछुआरा ? उसे कल दरबार में आने के लिए कह दो !" राजा वीरवर्मा ने कहा ।

सेवक चला गया, पर कुछ देर बाद लौट आया और बोला, "महाराज, वह आपसे कोई विशेष बात बताकर अभी लौटना चाहता है। वह दूर गाँव से दो दिन की लम्बी पैदल यात्रा करके और अनेक कष्ट उठाकर यहाँ आया है ।"

"अच्छी बात है ! उसे हाज़िर करो !" राजा ने उदासीन भाव से कहा ।

कुछ देर बाद एक पच्चीस वर्ष का मछुआरा युवक वहाँ आया । उसने राजा वीरवर्मा को झुककर प्रणाम किया और बोला, "महाराज, मेरा नाम सिंहाचलम है ।"

वीरवर्मा के उद्यान-भ्रमण में इस मछुआरे ने विघ्न डाला था, इसलिए वे खीजकर बोले, "अरे, तुम्हारा नाम सिंहाचलम हो या गरुडाचलम, इससे हमें क्या अन्तर पड़ता है ? क्या कोई ख़तरा पैदा होनेवाला है, या तुम अपना नाम बताने के लिए मुझसे मिलने आये हो ?"

"महाराज, क्षमा कीजिए ! एक अत्यन्त गुप्त बात है । हमारे गाँव के पास समुद्र में एक मत्स्यकन्या है ।" सिंहाचलम ने कहा ।

"मत्स्यकन्या ?" वीरवर्मा ने चकित होकर पूछा ।

"जी हाँ, महाराज ! वह मत्स्यकन्या दुनिया में कहाँ क्या हो रहा है, सब बता सकती है ।" सिंहाचलम ने कहा ।

"क्या कहा ? क्या मत्स्यकन्या ने तुमसे बात की है ? वह देखने में कैसी है ? उसने तुम्हें क्या-क्या बताया है ? सब मुझसे कहो !" राजा

गंगाधर

ने कुतूहल दिखाकर पूछा ।

सिंहाचलम ने कहा, "दो दिन पहले मैं भोजन करके दोपहर के समय नाव लेकर समुद्र पर चल पड़ा। तभी मुझे समुद्र के किनारे के काजू के पेड़ों के निकट से कोमल खिलखिलाहट सुनाई दी। मैंने उधर जाकर देखा तो कमर तक एक सुन्दर नारी की आकृतिवाली और उसके नीचे मछली की आकृतिवाली एक मत्स्यकन्या दिखाई दी।

वह कन्या मुझे देखकर बोली, 'सिंहाचलम, जब सारी दुनिया समुद्र के इस ओर बसी है तो तुम समुद्र में जाकर कौनासी विद्या सीखना चाहते हो ?'

मैं मत्स्यकन्या की अनोखी आकृति देखकर चकित रह गया और उससे बोला, 'इस ओर बसी दुनिया में जीने के लिए समुद्र ही तो मेरा एकमात्र आधार है। तुम तो समुद्र पर जीवन यापन करती हो, तुम्हें पृथ्वी पर वास करनेवाले लोगों की मुसीबतों का पता भला कैसे लग सकता है ?'

मेरी बात सुनकर मत्स्यकन्या ठहाका मारकर हँस पड़ी और बोली, 'यह सत्य है कि समुद्र ही मेरा निवास-स्थान है। पर इस दुनिया में कब, कहाँ, क्या होता है, वह सब कुछ मुझे स्पष्ट दिखाई देता है।'

'अच्छा, ऐसी बात है ! तब तो बताओ, इस समय हमारे राजा क्या कर रहे हैं ?' मैंने पूछा।

मत्स्यकन्या ने क्षण भर के लिए आँखें बन्द कीं, फिर आँखें खोलकर बोली, 'इस समय तुम्हारे राजा अपनी रानी से दुबारा खीर परोसने के लिए कह रहे हैं !'

इसके बाद मैं मछलियां पकड़ने के लिए समुद्र पर चला गया।

मैं रात बीते लौटा तो मैंने देखा कि मत्स्यकन्या काजू के उन्हीं पेड़ों के पास खड़ी थी।

उसने मुझसे कहा, 'सुनो, इस समय तुम्हारे राजा को उनकी रानी हिरन का मांस परोसने जा रही है, लेकिन राजा मना कर रहे हैं। ऐसा लगता है कि तुम्हारे राजा सदा खाने-पीने में ही मग्न रहते हैं, राज्य की उन्हें कोई चिंता नहीं है।' यह कहकर मत्स्यकन्या समुद्र के अन्दर चली गयी।

मैं उस सारी रात मत्स्यकन्या के बारे में ही सोचता रहा, मुझे नींद नहीं आयी। मेरे मन में यह

विश्वास पक्का होगया कि मत्स्यकन्या जो कुछ कह रही है, सत्य है और वह बहुत कुछ बता सकती है। मैंने सोचा कि राजा के लिए वह बहुत काम की है। शत्रु राजाओं के विचार, राजद्रोहियों के षडयंत्र, संकट की पूर्व सूचना आदि बातें अगर हमारे महाराज को पहले ही पता लग जायें तो यह राज्य के लिए हितकर होगा।

महाराज, इस प्रकार मैं रास्ते की अनेक मुसीबतें पार करके राजधानी तक पहुँचा हूँ। मेरे गाँव से शहर तक आने के लिए सड़क तो दूर कोई पगडंडी तक नहीं है।"

सिंहाचलम के मुख से यह सारी कहानी सुनकर राजा वीरवर्मा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। जब राजा भोजन करते थे तो उस समय रानी के अलावा और कोई नहीं होता था। राजा ने रानी से खीर परोसने के लिए कहा था और हिरन का मांस परोसने के लिए मना किया था, ये दोनों ही बातें सच हैं। निश्चय ही उस मत्स्यकन्या में दूर देखने की और दूर सुनने की शक्ति होनी चाहिए। हो सकता है, वह मन की बातें भी जान लेती हो।

वीरवर्मा इस प्रकार के चिन्तन में कुछ क्षण खोये रहे। तब सिंहाचलम ने उन्हें एक बार फिर प्रणाम करके कहा, "महाराज, मुझे देर हो रही है, अब आज्ञा दीजिए!"

"अच्छी बात है, तुम जाओ! कल मैं तुम्हारे गाँव आऊँगा।" यह कहकर राजा ने अपने सेवक को पुकारा और मछुआरे को सौ सिक्के दिलवाकर विदा किया।

दूसरे दिन राजा वीरवर्मा की यात्रा के लिए सारा प्रबन्ध किया गया। पहली रात कुछ राजसैनिक सिंहाचलम के गाँव के लिए रवाना होगये थे। उन्होंने काजू के पेड़ों के बगीचों में राजा और रानी के लिए ख़ेमे लगवाये। अनेक कारीगरों और मज़दूरों ने मिलकर राजधानी से उस छोटे से गाँव तक पहुँचने के लिए एक सुन्दर मार्ग बनाया, ताकि राजा का रथ और भंडार की सामग्री आसानी से वहाँ पहुँच सके।

राजा वीरवर्मा रानी को साथ लेकर शाम तक उस गाँव में पहुँचे। सिंहाचलम उन्हें एक ख़ास स्थान पर ले गया और बोला, "महाराज, यही वह स्थान है, जहाँ मैंने उस मत्स्यकन्या से बात की

थी ।"

राजा वीरवर्मा उसी स्थान पर ठहर गये । रात होगयी । चांदनी छिटक गयी, पर मत्स्यकन्या वीरवर्मा को दिखाई नहीं दी । फिर भी, समुद्र के खुले वातावरण में उनका समय आसानी से बीत गया ।

इसी तरह चार दिन निकल गये, लेकिन राजा वीरवर्मा को मत्स्यकन्या दिखाई नहीं दी । राजा ने निराश होकर राजधानी लौटने की तैयारी कर ली । तब सिंहाचलम राजा से एकान्त में मिला और बोला, "महाराज, आप मुझे क्षमा करने का वचन दें तो मैं आपसे सच्ची बात निवेदन करना चाहूँगा ।"

"सच्ची बात ! क्या है वह सच्ची बात ?" राजा ने पूछा ।

"महाराज, मत्स्यकन्या मेरी अपनी ही कल्पना है ।" सिंहाचलम ने उत्तर दिया ।

वीरवर्मा को क्रोध से अधिक विस्मय हुआ । उन्होंने पूछा, "तुमने कल्पना से इतनी भारी कहानी कैसे गढ ली ?"

उत्तर में सिंहाचलम ने कहा, "महाराज, अंतःपुर में महारानी की सेवा में लवंगी नाम की एक दासी काम करती है । वह मेरे गाँव की लड़की है । हम बचपन से ही साथ बड़े हुए हैं । हमारे माँ-बाप ने हमारा विवाह बहुत पहले ही पक्का कर दिया था । हम दोनों आपस में बहुत प्रेम करते हैं । पर कुछ दिनों बाद लवंगी के पिता ने यह गाँव छोड़ दिया । उनका गुज़ारा यहाँ नहीं हो पाता था, इसलिए वह राजधानी में चले गये और अब वहाँ छोटा-मोटा कोई व्यापार कर रहे हैं । लवंगी को भी इस बीच राजमहल में काम मिल गया ।"

"हमारे विवाह को पंद्रह दिन बाक़ी हैं । गाँव से राजधानी में जाना बड़ा संकट का काम है । विवाह के बाद लवंगी गाँव में रहेगी । उसे जब भी अपने माता-पिता के पास उनसे मिलने के लिए आना होगा, तो बड़ी परेशानी उठानी पड़ेगी । लवंगी यही सब सोचकर चिंता में डूबी हुई है ।" सिंहाचलम ने आगे कहा ।

राजा वीरवर्मा चुपचाप सुनते रहे । आगे फिर सिंहाचलम ही बोला, "महाराज, मैंने लवंगी से कहा कि अगर हमारे महाराज एकबार भी हमारे

गाँव आजायें तो राजधानी से गाँव तक एक सुन्दर सड़क बन जाये। उसने मुझसे पूछा, 'सड़क तो बन जाये, पर महाराज तुम्हारे इस छोटे से गाँव में आयेंगे ही क्यों ?' तब महाराज, मैंने सारे दिन सोचकर मत्स्यकन्या की कहानी गढ़ी।"

सिंहाचलम के मुँह से सारी कहानी सुनकर राजा ने मुस्कराकर पूछा, "लेकिन खीर परोसने और हिरन का मांस न परोसनेवाली बात तुम्हें कैसे मालूम हुई ? भोजन के समय मेरे पास महारानी के अलावा और कोई नहीं होता है।"

"महाराज, वार्तालाप के समय महारानी ने किसी प्रसंग से ये बातें लवंगी को बतायीं। लवंगी से ये बातें जानने के बाद मैंने मत्स्यकन्या की योजना के बारे में विचार किया। अब आप चाहें तो मुझे दंड दें, पर आपके आगमन से हमारे गाँव का रूप ही बदल गया है। राजधानी से हमारे गाँव तक एक अच्छी सड़क बन गयी है। लवंगी जब अपने माता-पिता को देखने के लिए जाना चाहेगी, किराये की गाड़ी में जाकर उन्हें देख सकेगी।" सिंहाचलम ने कहा।

राजा कुछ क्षण मौन रहे, फिर बोले, "सिंहाचलम, तुमने लवंगी के साथ मिलकर तो बड़ा भारी नाटक रच डाला ! लेकिन, फिर भी तुमने कुछ उपकार किया है। मुझे एक सत्य का बोध हुआ। राजा जब तक अपने राज्य के हर कोने में नहीं जायेगा, तब तक वह अपनी प्रजा की कठिनाइयों और आवश्यकताओं को समझ नहीं पायेगा। मैं अब वर्ष में एक माह अपने देश का भ्रमण किया करूँगा।" यह कहकर राजा ने अपने कंठ से एक बहुमूल्य हार उतारकर सिंहाचलम को दिया और कहा, "यह हार तुम्हारे और लवंगी के विवाह के उपलक्ष्य में हमारा उपहार है।"

सिंहाचलम के मन में भय भी था और शंका भी कि राजा को जब मत्स्यकन्या की मनगढ़न्त कहानी का पता लगेगा और उसका झूठ खुलेगा, तब वे न जाने उसे कौनसा दंड देंगे। पर इसके विपरीत राजा से पुरस्कार पाकर सिंहाचलम की प्रसन्नता का कोई पार न रहा। उसने राजा को झुककर बार-बार प्रणाम किया।

[३]

दुष्टकार्य करनेवाले आदमी भी दो प्रकार के होते हैं। पहले तो वे जो अक्लमंद होते हैं और अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों से लोगों को फुसला लेते हैं। इस तरह ये जनता के विश्वास की रोटी खाते हैं और उसी की मेहनत पर अपना गुज़ारा करते हैं।

दूसरे वे लोग होते हैं। ये अपने दुष्ट कार्यों से लोगों को सताकर आनन्द का अनुभव करते हैं। अक्लमंद दुष्टों के साथ एक ही अच्छाई है कि वे जनता के लिए ख़तरा नहीं बनते। पर अगर जनता समझदार बन गयी तो उनके लिए ख़तरा पैदा हो जाता है। पर जो दुष्ट मूर्ख होते हैं, जनता के द्वारा उनके लिए एक न एक दिन ख़तरा निश्चित है। क्योंकि जनता अधिक समय तक उन्हें सहन नहीं कर पाती। किसी न किसी दिन वह विद्रोह कर ही बैठती है।

ऐसी ही स्थिति शतनन्दन गाँव में आ उपस्थित हुई। गाँव के वे दोनों मुखिया दुष्टों की अक्लमंद श्रेणी में आते थे। पर उनके जो पुत्र थे, वे भयानक मूर्ख थे। यही एक विडम्बना थी। शतनंदन गाँव की प्रजा उनके पिताओं का आदर करती थी, इसलिए वे दोनों लड़के बचपन से ही उद्दण्डता दिखाने लगे।

वीर और धीर नाम के वे दोनों लड़के ऐसा व्यवहार करते मानो उनका मन-प्राण एक है। वे किसी के भी बाग में घुस जाते और आम तथा दूसरे फल चुरा लेते। कभी वे किसी के घर का कांच का सामान तोड़ डालते, दूसरों के बच्चों को अकारण ही सताते। ऐसी अनेक प्रकार की उद्दण्डता वे किया करते थे।

अपने बेटों के बारे में यह सब जानकर उनके पिताओं ने उनसे कहा, "तुम दोनों दूसरों के बाग़ों

से फल तोड़ते हो। अब एक काम और करो ! दूसरों के घरों से दूध, दही, मक्खन चुराना भी आरंभ कर दो ! इससे हमारा काम आसान हो जायेगा ।"

वीर, धीर को अपने बुजुर्गों की यह सलाह बड़ी अच्छी लगी। वे अब दूध, दही मक्खन भी चुराने लगे। कुछ दिन तो निकल गये। पर अंत में गाँव के लोगों से सहा नहीं गया। उन्होंने दोनों बुजुर्गों के घर जाकर अपनी विपदा सुनायी।

बुजुर्गों ने उन्हें शांत किया। फिर बड़ा प्रेम जताकर बोले, "हमारे बच्चों में श्रीकृष्ण का अंश है, इसीलिए वे ऐसा व्यवहार करते हैं। द्वापर युग में श्रीकृष्ण की ये चंचल बाल लीलाएँ देखकर गोपिकाएं यशोदा के पास जाकर शिकायत किया करती थीं। लेकिन, सच्ची बात तो यह थी कि वे सभी कृष्ण को हृदय से प्यार करती थीं। तुम लोग भागवत की कथा नहीं जानते, इसीलिए परेशान हो। आज से तुम लोग प्रतिदिन शाम को हमारे घर के चौवारे में आकर भागवत पुराण की कथा सुना करो !"

उस दिन के बाद भी शतनंदन गाँव के लोगों को उन दोनों दुष्ट बच्चों की शरारतों से मुक्ति तो नहीं मिली, और उलटे उन दोनों बुजुर्गों के चौवारे पर हाज़िरी शुरू होगयी। वहाँ वे भागवत पुराण की कथा सुनते तो उनके मन में अनेक प्रकार की शंकाओं का अंबार-सा उठता। अब यह क्रम अधिक दिन तक नहीं चल सका।

गाँव के लोग सोचते कि बचपन में श्रीकृष्ण ने अनेक चपलताएँ दिखाईं। मक्खन चुराया, मटकियां भी फोड़ीं। पर साथ ही उन्होंने अनेक अद्भुत कार्य भी किये। गोकुल के लोगों पर जब भी विपदा आयी, उन्होंने उनकी रक्षा की। कालिय मर्दन किया। गोवर्द्धन पर्वत उठाया और भी अनेक अलौकिक कार्य किये। लेकिन गाँव के इन बड़े बुजुर्गों के ये दोनों बेटे तो सताने के काम ही करते हैं। कभी सुख नहीं देते।

ग्रामवासियों ने उन दोनों बुजुर्गों के सामने अपना संदेह प्रकट किया। सब सुनकर वे धूर्त बुजुर्ग भी असमंजस में पड़ गये।

"तुम लोगों का कहना तर्क-संगत है। हम एक रात तपस्या करके इसका रहस्य जान लेंगे। इसके बाद हम तुम्हारी शंकाएं दूर करेंगे।" इस

प्रकार समझा बुझाकर उन बुजुर्गों ने ग्रामवासियों को विदा किया ।

ग्रामवासियों के चले जाने के बाद छोटे बुजुर्ग ने बड़े बुजुर्ग से कहा, "बताइये, अब हमें क्या करना चाहिए ? हमारे बच्चों के कारण हमारा रुतबा ख़त्म होने जा रहा है। बच्चों को समझाकर अगर हम उन्हें सही मार्ग पर नहीं लाये तो आगे गाँव के लोग चुप रहनेवाले नहीं हैं ।"

बड़ा बुजुर्ग थोड़ी देर तक सोचकर फिर बोला, "हमारे बच्चे हमारी बात नहीं सुनते । अगर वे हमारी बात सुन भी लें तो उनके मन को दुखाना हमें पसन्द नहीं है। वास्तव में, यह सारी मुसीबत ग्रामवासियों को पुराण सुनाने के कारण उपस्थित होगयी है । मैंने सोचा था कि पुराण कथाएँ सुनाकर जनता को और अधिक मूर्ख बनाया जा सकता है और उनमें दुष्टता को सहन करने की आदत डाली जा सकती है । मगर यह तो उलटा ही हुआ। पुराण सुनने से लोगों में बुद्धि का जागरण हो रहा है । उनमें बुराई का सामना करने की हिम्मत भी बढ़ती जारही है । इसलिए पहली बात तो यह है कि हमें जनता को पुराण सुनाना तुरन्त बन्द कर देना चाहिए ।"

"यह बात तो ठीक है । लेकिन यह बताओ कि हम अपने बच्चों पर नियंत्रण कैसे कर सकते हैं ?" छोटे बुजुर्ग ने पूछा ।

इसके बाद दोनों बुजुर्गों ने रात भर इस समस्या पर विचार किया । आखिर उन्हें एक अच्छी युक्ति सूझ गयी। दूसरे दिन जब ग्रामवासी पुराण सुनने के लिए आये, तब बड़े बुजुर्ग ने उन्हें जय-विजय की कहानी सुनायीः

जय-विजय वैकुण्ठ में भगवान विष्णु के द्वारपाल थे । एक बार सनक, सनन्द आदि महाविष्णु के दर्शन करने गये। द्वारपालों ने उन्हें यह कहकर रोक दिया, भगवान विष्णु से मिलने का यह समय नहीं है । आप कुछ देर प्रतीक्षा कीजिए !

दोनों मुनि कुपित हो उठे और उन्होंने जय-विजय को शाप दिया कि वे राक्षस बन जायें। जब विष्णु को यह समाचार मिला तो उन्होंने जय-विजय को बुलाकर समझाया, 'इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। पर मुनियों के शाप को बदला नहीं जा सकता। इसलिए तुम्हें राक्षस-जन्म तो धारण करना ही पड़ेगा। पर मैं तुम्हें एक अवसर

दे रहा हूँ। तुम दोनों अच्छे कार्य करते हुए पुण्यात्मा कहलाओ। ऐसी स्थिति में तुम्हें मुझ तक आने के लिए सात जन्म धारण करने पड़ेंगे। पर अगर तुम तीन जन्मों के बाद ही मेरे पास आना चाहते हो तो तुम्हें राक्षसी कार्यों को करना होगा !'

तब जय-विजय ने कहा, 'भगवान, हम आपको छोड़कर नहीं रह सकते चाहे हम दुष्ट, राक्षस, लोक-कंटक कहलायें, पर हम जल्दी ही आप तक आना चाहते हैं। इसलिए हमें दुष्टों के तीन जन्म ही प्रदान कीजिए !'

इस प्रकार वे कृतयुग में हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यप बने, त्रेतायुग में रावण और कुंभकर्ण बने, द्वापर युग में शिशुपाल एवं दंतवक्र बने और फिर अनेक दुष्टकार्यों के बाद अंत में विष्णु धाम को चले गये। उन्होंने भगवान विष्णु के साथ ऐक्य प्राप्त किया।

इस प्रकार शतनंदन गाँव के उस बड़े बुजुर्ग ने अपनी कहानी को समाप्त कर कहा, "अभी जो मैंने कहानी सुनायी, वह पुराण की कहानी है। अब आगे सुनो ! तीनों युगों के बाद कलियुग आया। कलियुग के मन में यह इच्छा जाग्रत हुई कि क्यों न मैं अपने युग को अधिक यशस्वी बनाऊँ। उसने महाविष्णु के पास जाकर निवेदन किया, 'भगवान, तीनों युगों में जन्म लेकर जय-विजय ने अनेक दुष्ट कार्य किये हैं। आप मेरे युग को ही क्यों वंचित रखना चाहते हैं ? कितना अच्छा हो, अगर ये दोनों मेरे युग में भी जन्म लेकर दुष्ट कार्य करें ! आप मुझ पर अनुग्रह कीजिए ! वरना, आप पक्षपाती कहलायेंगे।"

भगवान महाविष्णु ने कलियुग पर अनुग्रह किया । इस कारण जय और विजय का जन्म हमारे परिवारों में हुआ । हमारे ये दोनों पुत्र वीर और धीर ही श्री महाविष्णु के द्वारपाल हैं । वे महापापों को करके जल्दी से जल्दी भगवान विष्णु से ऐक्य प्राप्त करना चाहते हैं । इसलिए यह तो महाविष्णु का ही आयोजन हैं । इसमें साधारण प्राणी हम क्या कर सकते हैं ? हम अगर इन दोनों का सामना करेंगे तो भगवान विष्णु हम पर नाराज़ हो जायेंगे । श्री महाविष्णु को कुपित करने में अगर तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है तो हम उन्हें अपनी संतान होने पर भी कठिन से कठिन दंड देने को तैयार हैं । हम इस बारे में किसी प्रकार की दया नहीं दिखायेंगे । अब आप बताइये कि हमें क्या करना है ?"

"जय-विजय के बारे में निर्णय करनेवाले हम कौन होते हैं ? इनका अंत करने के लिए तो स्वयं भगवान विष्णु ही पधारेंगे । तब तक हम प्रतीक्षा करते हैं ।" ग्रामवासियों ने एक स्वर में कहा ।

उस दिन से शतनंदन गाँव के उन दोनों दुष्ट लड़कों पर किसी प्रकार का अंकुश न रहा । ग्रामवासियों ने भी उनकी दुष्टता पर ध्यान देना छोड़ दिया । वे उनके अत्याचारों को सहने के अभ्यस्त होगये । धीरे-धीरे उन दोनों लड़कों में से बड़े वीर का नाम जय और छोटे धीर का नाम विजय पड़ गया ।

जय और विजय अब बीस साल के होगये । उनकी दुष्टता की कोई सीमा न रही ।

उन्हीं दिनों शतनन्दन गाँव में एक परदेशी आया । वह बीस वर्ष का एक सुदर्शन युवक था । स्वर्णिम रंग की देह, छह फुट क़द, सुन्दर आकृति, मुखमंडल पर अपूर्व तेज । उसका नाम था राजदीप । उसे देखकर अनेक लोगों ने सोचा कि वह किसी महान राजवंश का व्यक्ति है ।

परदेशी राजदीप कुछ देर तक एक पेड़ की छाया में बैठा रहा । वह बड़ी दूर से आया था और यात्रा के कारण थका हुआ था । कुछ देर विश्राम करने के बाद उसने उस मार्ग से गुज़रनेवाले एक आदमी को पुकार कर पूछा, "महाशय, मैं आज एक दिन के लिए आपके घर विश्राम करना चाहता हूँ । आपको कोई आपत्ति तो नहीं है न ?"

वह आदमी घबराकर बोला, "मैं अपने गाँव के मुखिया से बात करके तब बताऊँगा।" यह कहकर वह जल्दी से चला गया।

राजदीप परदेशी था। वह इस गाँव के बारे में कुछ नहीं जानता था। इसलिए चकित होकर उठ खड़ा हुआ और गाँव की तरफ़ बढ़ा। तभी एक स्त्री नदी से पानी भरकर लौट रही थी। राजदीप ने उस नारी से कहा, "बहन, मुझे प्यास लगी है। क्या थोड़ा पानी पिलाओगी ?"

वह नारी घबरा उठी और बोली, "थोड़ी देर ठहरो ! मैं अपने गाँव के मुखिया से अनुमति लेकर तब तुम्हें पानी पिलाऊँगी।" यह उत्तर देकर वह तुरन्त चली गयी।

इसके बाद भी परदेशी को राजदीप के रास्ते में अनेक लोग मिले। वह जिससे भी कुछ पूछता, वे मुखिया वाली बात दोहरा देते।

राजदीप को कुछ समझ नहीं आ रहा था। अजीब है इस जगह का रिवाज, यह सोचकर वह आगे बढ़ा चला जा रहा था कि तभी उसे एक मकान के भीतर से रोने की आवाज़ सुनाई दी। रोने का कारण जानने के लिए वह उस मकान के भीतर गया। उसने देखा कि वहाँ फ़र्श पर एक चटाई बिछी हुई है। उस पर दस वर्ष का एक बालक लेटा हुआ है और उसे घेरकर दस लोग रो रहे हैं।

राजदीप ने उनसे पूछा, "तुम लोग रो क्यों रहे हो ? आख़िर हुआ क्या है ?"

यह प्रश्न सुनकर कुछ लोगों ने अपना सिर उठाया, फिर राजदीप की ओर देखकर घबराकर कहा, "तुम परदेशी हो न ? हम अपने गाँव के

मुखिया से पूछे बिना कोई जवाब नहीं देते हैं।''

राजदीप को उनकी मूर्खता के कुछ प्रमाण तो पहले ही मिल चुके थे। उसने उनकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया और आगे बढ़कर लड़के के समीप पहुँचा। उसने उसकी नाड़ी की जाँच करके कहा, ''मेरी समझ में नहीं आता कि तुम लोग रो क्यों रहे हो ? इस बालक के प्राणों को कोई ख़तरा नहीं है। मैं इलाज करके इसे बचा लूँगा।''

तब उनमें से एक औरत बिलखकर बोली, ''हमने जो पाप किये हैं, उनके फलस्वरूप मेरे बेटे का मर जाना निश्चित है। हमारे गाँव के मुखिया ने इसका इलाज किया, पर इसकी बीमारी में थोडा सा भी सुधार नहीं हुआ। यदि कोई इसका इलाज करने का प्रयत्न करेगा, तो भी यह निरोग न होगा, बल्कि इसकी मौत भी बिगड़ जायेगी और यह नरक में जायेगा।''

राजदीप ने उस बालक का इलाज करने के लिए उन लोगों की अनुमति माँगी। पर उन लोगों ने अपनी सम्मति न दी। वह आग्रह करके थक गया तो खीजकर बोला, ''तुम लोग भले ही मना करो ! पर, मैं अपनी आँखों के सामने एक प्राणी को मौत के मुँह में जाते हुए देखकर चुप नहीं रह सकता। मैं इस बालक का इलाज अवश्य करूँगा।''

''हम लोग तुम्हें इलाज नहीं करने देंगे।'' सबने एक स्वर में कहा।

राजदीप ने उत्तेजित होकर कहा, ''मैं भी देखना चाहता हूँ कि आप लोग मुझे इस बालक का इलाज करने से कैसे रोक सकते हैं ? तुम्हारे गाँव के मुखिया ने तुम्हें इसका इलाज करने से रोकने के लिए तो नहीं कहा न ?''

यह प्रश्न सुनकर बालक को घेरकर बैठे लोग बड़े भारी असमंजस में पड़ गये। फिर वे आपस में विचार-विमर्श करने लगे— ''इस परदेशी का कहना सच है। हमें शीघ्र उन बुजुर्गों के पास जाना चाहिए और उनसे अनुमति लानी चाहिए।'' इसप्रकार निर्णय हो जाने के बाद उनमें से दो लोग बुजुर्गों के घर की तरफ़ दौड़ पड़े।

(अगले अंक में)

प्रकृति के आश्चर्य

दक्षिण अमरीका की नदियों में १६ प्रकार के पिरन हा जलचर हैं। लेकिन इनमें से केवल चार प्रकार के जलचर ही मनुष्यों के लिए ख़तरनाक हैं। ये एक साथ हज़ारों की संख्या में दल बांधकर तैरते हुए नज़र आते हैं।
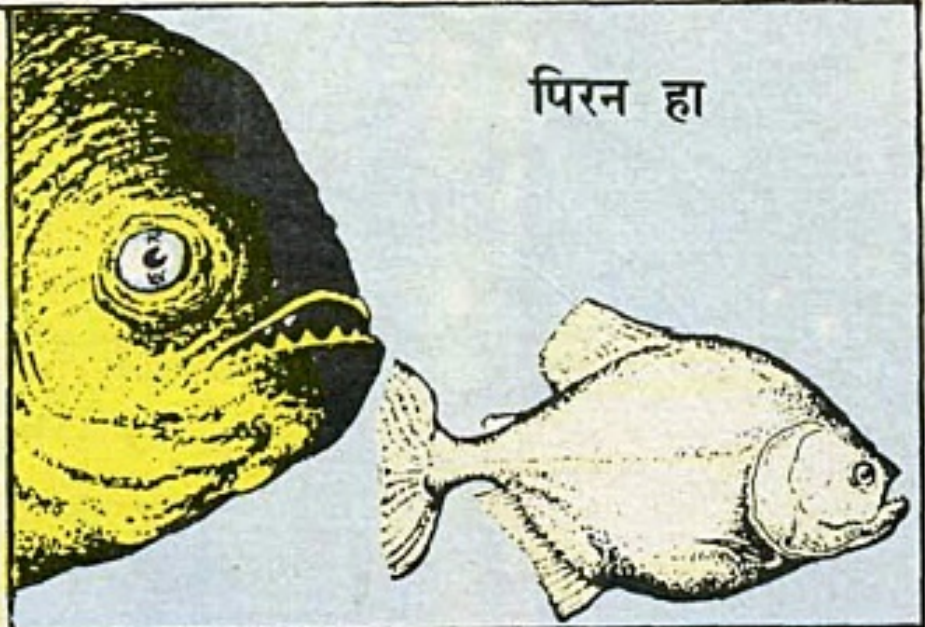
अत्यधिक वर्षा

हवाई के वाय-अले अले नाम के पर्वत-प्रदेश में वर्ष भर में ३३५ दिन वर्षा होती है। प्रतिवर्ष औसतन ४८६.२ इंच वर्षा यहाँ होती है।

रक्त गिरानेवाली आँखें

अमरीका में एक ऐसे किस्म का मेंढक है, जो चाहे तो आँखों से रक्त छितरा सकता है। सिर के भीतर रक्त का संचार अधिक करके आँखों की छोटी-छोटी रक्त की नलियों द्वारा तहों में दरारें पैदा करने से यह संभव होता है। कहा जाता है कि यह जानवर आत्मरक्षा के लिए ऐसा करता है।

मिलिये सुपरफ़ाइटर्स से!
Forhan's
FOAMING
FLUORIDE
मैदान पर सुनील गावसकर की रग-रग में फड़कता है मुकाबले का जोश.
तभी तो दुनिया उन्हे 'सुपरबैट्समैन' कह कर पुकारती है. पर सुनील गावसकर कहते हैं – "मैं तो सुपरफ़ाइटर हूँ और मैं अपने बेटे को भी बनाऊँगा सुपरफ़ाइटर. तभी तो मैं उसे बचपन से ही सही दाँव-पेंच सिखा रहा हूँ. जैसे दाँतों की देखभाल के लिये फोरहॅन्स फ़्लोराइड—सड़न के खिलाफ़ सुपरफ़ाइटर."
कीटाणु भोजन के कणों पर असर करते हैं
और ऐसे एसिड पैदा करते हैं, जिनसे सड़न शुरू होती है. फोरहॅन्स के सुपरफ़ाइटर में असरकारक फ़्लोराइड है जो दाँतों का इनेमल मज़बूत करके एसिड के हमले को रोकता है.
और फोरहॅन्स का अनोखा एस्ट्रिंजेंट मसूड़ों को कस कर दाँतों को मज़बूत आधार देता है, बरसों बरकरार रहने के लिये.
सुनील साहब और कुछ?
"मैं अपने बेटे को देता हूँ फोरहॅन्स सुरक्षा. आप?"
फोरहॅन्स
३२ बरकरार

GM-113/86 Hn.

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जून १९८७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

I. Uma Rani

S. G. Seshagiri

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

फरवरी के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **न बिकने का गम !**

द्वितीय फोटो : **बेचके जायेंगे हम !!**

प्रेषक : **अशोक कुमार बेलदार,** उत्तर प्रदेश परिवहन निगम, लोनी डिपो, दिल्ली-१५

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास -६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

The stories, articles and designs contained herein are exclusive property of the Publishers and copying or adapting them in any manner will be dealt with according to law.

No share prices,
no political fortunes, yet...

Over 40% of Heritage readers are professionals or executives, 61% from households with a professional / executive as the chief wage earner. Half hold a postgraduate degree or a professional diploma.

– from an IMRB survey conducted in Oct. 1986

It's an unusual magazine. It has a vision for today and tomorrow.

It features ancient cities and contemporary fiction, culture and scientific developments, instead of filmstar interviews and political gossip. And it has found a growing readership, an IMRB survey reveals. Professionals, executives and their families are reading The Heritage in depth – 40% from cover to cover, 42% more than half the magazine.

More than 80% of The Heritage readers are reading an issue more than once.

And over 90% are slowly building their own Heritage collection.

Isn't it time you discovered why?

CMP-2155

So much in store, month after month.

PARLE

एक खूबसूरत से द्वीप पर है राम के चाचा-चाची का घर, अपनी छुट्टियां मनाने पहुंचे राम और श्याम वहां पर.

राम और श्याम देखने निकले खूबसूरत नज़ारा, साथ-साथ लेते रहे रसीली पोपिन्स का मज़ा.

अचानक...
ये तीरों की मार?
ये क्यों हम पर?
ZIP!
ZIP!

लगता है ये आदिवासी हमसे डरते हैं!
चलो, इन तीरों में एक-एक पोपिन्स पैक बांध कर इन तक पहुंचाएं, ताकि ये खुद ही हमारे दोस्त बन जाएं.

श्याम ने ज़ोर लगा कर ऐसा तीर फेंका, सामने के पेड़ में जो, जा सीधे अटका.

रंग बिरंगे पोपिन्स पैक जो देखे, आदिवासी हौले से बाहर निकले. पोपिन्स की गोलियां खाईं, खूब पसंद आयीं.

POPPINS

पोपिन्स का स्वाद इन्हें इतना पसंद आया राम और श्याम को खूब गले लगाया.

राम और श्याम सदा पोपिन्स रखते साथ अपने-आप ही सब बढ़ाते उन तक दोस्ती का हाथ.

पारले
पोपिन्स
रसीली.प्यारी.मज़ेदार.

everest/86/PP/411-hn